॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद॥

॥ अथ अष्टादशं काण्डम्॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १- पितृमेध सूक्त 4
सूक्त २ – पितृमेध सूक्त 32
सूक्त ३ – पितृमेध सूक्त 57
सूक्त ४- पितृमेध सूक्त 91

॥अथर्ववेद – अष्टादशं काण्डम्॥

सूक्त १- पितृमेध सूक्त

विषय यमयमी संवाद एवं अग्नि आदि देवों की स्तुति, भाई और बहन पर आक्षेप, देवों ने जल, वायु और ओषधि तत्त्व को पृथ्वी पर स्थापित किया, सोमाग्नि के सिद्ध होने पर अग्निष्टोम आदि कर्म, अग्नि की प्रशंसा, आकाश तथा पृथ्वी मुख्य तथा सत्यवाणी हैं, मित्र एवं वरुण देवता से प्रार्थना, पितरों द्वारा सरस्वती का आह्वान तथा दाह संस्कारका विषय

ओ चित्सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरु चिदर्णवं जगन्वान् । पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमि प्रतरं दीध्यानः ॥१८,१.१॥

(यमी ने कहा) हे यमदेव ! विशाल समुद्र (व्योम) के एकान्त प्रदेश में सख्य भाव या मित्ररूप से आपसे मैं मिलना चाहती हूँ । विधाता की इच्छा है कि नौका के समान संसार-सागर में तैरने के लिए पिता के नाती सदृशश्रेष्ठ सन्तति को जन्म देने के लिए हम परस्पर संगत हों ॥१८,१.१॥

न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत्सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवति ।

महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तारि उर्विया परि ख्यन् ॥१८,१.२॥

(यम का कथन) हे यमी ! आपका सहयोगी यम आपके साथ इस प्रकार के सम्पर्क की कामना से रहित है, क्योंकि आप सहोदरा बहिन हैं। हमें यह अभीष्ट नहीं । असुर (प्राणरक्षक, शक्ति-सम्पन्न व्यक्तियों या तत्त्वों) के वीर पुत्र, जो दिव्य लोकादि के धारणकर्ता हैं, वे सर्वत्र विचरण करते हैं (उनकी संगति ही अभीष्ट हो) ॥१८,१.२॥

उशन्ति घा ते अमृतास एतदेकस्य चित्त्यजसं मर्त्यस्य ।
नि ते मनो मनसि धाय्यस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविष्याः ॥१८,१.३॥

(यमी का कथन है) है यम ! यद्यपि मनुष्यों में ऐसा संयोग त्याज्य है, तो भी देवशक्तियाँ इस प्रकार के संसर्ग की इच्छुक होती हैं । मेरी इच्छा का अनुसरण आप भी करें । पतिरूप में आप ही हमारे लिए उपयुक्त हैं ॥१८,१.३॥

न यत्पुरा चकृमा कद्ध नूनमृतं वदन्तो अनृतं रपेम ।
गन्धर्वो अप्स्वप्या च योषा सा नौ नाभिः परमं जामि तन् नौ ॥१८,१.४॥

(यम का कथन) हे यमी ! हमने पहले भी इस प्रकार का कृत्य नहीं किया । हम सत्यवादी हैं, असत्य वचन नहीं बोलते । अप् (सृष्टि का मूल तत्त्व) से ही गन्धर्व और अप् से ही योषा (नारी-माता) की उत्पत्ति हुई है, वे ही हम दोनों के उत्पादक हैं, यही हमारा विशिष्ट सम्बन्ध है (जिसे हमें निभाना चाहिए ॥१८,१.४॥

गर्भे नु नौ जनिता दम्पती कर्देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः ।
नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथिवी उत द्यौः ॥१८,१.५॥

(यमी का कथन) हे यम ! सर्वप्रेरक और सर्वव्यापी उत्पादनकर्ता त्वष्टा (गढ़ने वाले) देव ने हमें गर्भ में ही (एक साथ रहकर) दम्पति के रूप में सम्बद्ध किया हैं । उस प्रजापालक परमेश्वर की इच्छा (विधि-व्यवस्था) कोरोकने में कोई सक्षम नहीं, हमारे इस सम्बन्ध का पृथ्वी और द्युलोक को भी परिचय है ॥१८,१.५॥

को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्ह्णायून् ।
आसन्निषून् हृत्स्वसो मयोभून् य एषां भृत्यामृणधत्स जीवात्॥१८,१.६॥

सामर्थ्यवान् शत्रुओं पर क्रोध करने वाले, बाण धारण करके लक्ष्यभेद करने वाले, इन्द्रदेव के रथ, जिसकी धुरी ऋत (सत्य अथवा यज्ञ) है, उसके साथ अश्वों को आज कौन योजित कर सकता है? वहीं (ऐसा करने वाला) जीवित (प्राणवान्) रहता है ॥१८,१.६॥

को अस्य वेद प्रथमस्याह्नः क ईं ददर्श क इह प्र वोचत्।
बृहन् मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आहनो वीच्या नॄन्
॥१८,१.७॥

हे यम ! इस प्रथम दिवस की बात से कौन परिचित है? इसे कौन देखता है ?इस पारस्परिक सम्बन्ध को कौन बतलाने में समर्थ है ?मित्रावरुण देवों के इस महान् धाम में अध:पतन की बात आप किस प्रकार कहते हैं?॥१८,१.७॥

यमस्य मा यम्यं काम आगन्त्समाने योनौ सहशेय्याय ।
जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद्वृहेव रथ्येव चक्रा
॥१८,१.८॥

पति के प्रति पत्नी के समर्पण के समान ही, तुम्हें अपने आपको सौंपती हूँ । एक ही स्थान पर साथ-साथ रहकर कर्म करने की कामना मुझे प्राप्त हुई है । हम रथ के दो पहियों की तरह समान कार्यों में प्रेरित हों ॥१८,१.८॥

न तिष्ठन्ति न नि मिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति ।
अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा
॥१८,१.९॥

(यम का कथन) हे यमी ! इस लोक में जो देवताओं के पार्षद हैं, वे रात-दिन विचरण करते हैं, वे कभी रुकते नहीं, उनकी दृष्टि से कुछ भी छिपा सकने की सामर्थ्य नही । हे आक्षेपकारिणि ! आप कृपया इस भावना से मेरे समीप से चली जाएँ और किसी दूसरे को पतिरूप में वरण करें ॥१८,१.९॥

रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत्सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन् मिमीयात्।
दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य विवृहादजामि
॥१८,१.१०॥

(यमी का कथन) हे यम ! रात्रि और दिवस दोनों ही मारी कामनाओं को पूर्ण करें, सूर्य का तेज यम के लिए तेजस्विता प्रदान करे । द्युलोक और पृथ्वी के समान ही हमारा सम्बन्ध अभिन्न साथी का है, अतएव यमी, यम का साहचर्य प्राप्त करे, इसमें दोष नहीं है ॥१८,१.१०॥

आ घा ता गछान् उत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्न् अजामि ।
उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिछस्व सुभगे पतिं मत्॥१८,१.११॥

(यम का कथन) हे यमी ! ऐसा समय भविष्य में आ सकता है, जिसमें बहिनें बन्धुत्व भावरहित भाइयों को ही पतिरूप में स्वीकार करें; किन्तु हे सुभगे ! आप मुझसे पतित्व सम्बन्ध की अपेक्षा न रखें। आप किसी दूसरे से सन्तानोत्पत्ति की इच्छा करें ॥१८,१.११॥

किं भ्रातासद्यदनाथं भवाति किमु स्वसा यन् निर्ऋतिर्निगछात्।
काममूता बह्वेतद्रपामि तन्वा मे तन्वं सं पिपृग्धि ॥१८,१.१२॥

(यमी का कथन) हे यम ! वह कैसा भाई जिसके रहते बहिन अनाथ फिरे ? वह कैसी बहिन; जो लाचार की तरह पलायन कर जाए? काम भावना से प्रेरित होकर मेरे द्वारा बहुत बात कही जा रही है, इसीलिए परस्पर काया को संयुक्त करें ॥१८,१.१२॥

न ते नाथं यम्यत्राहमस्मि न ते तनूं तन्वा सं पपृच्याम् ।

अन्येन मत्प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत्॥१८,१.१३॥

हे यमी ! यहाँ मैं (यम) तुम्हारा स्वामी नहीं हैं, अतएव तुम्हारे शरीर के साथ अपने शरीर को संयुक्त करना उपयुक्त नहीं, तुम मेरे प्रति इस अभिलाषा को त्यागकर अन्य पुरुष के साथ आनन्द का उपभोग करो। हे सौभाग्यवति ! आपका भाई यम इस प्रकार का (दाम्पत्य सम्बन्ध तुम्हारे साथ स्थापित नहीं कर सकता ॥१८,१.१३॥

न वा उ ते तनूं तन्वा सं पिपृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगछात्।
असंयदेतन् मनसो हृदो मे भ्राता स्वसुः शयने यच्छयीय ॥१८,१.१४॥

पूर्वोक्त कथन को सुदृढ़ता प्रदान करते हुए यम कहते हैं- हे यमी ! आपके साथ मैं अपने शरीर को किसी भी स्थिति में संयुक्त करने में सहमत नहीं । धर्मवेत्ता ज्ञानियों ने भाई-बहिन के पवित्र सम्बन्ध में इसे धर्म विरुद्ध, पापकर्म कहा हैं। मैं भाई होते हुए बहिन की शय्या पर शयन करूं, यह भावना (हृदय) तथा बुद्धि (मन) दोनों दृष्टियों से असंगत है ॥१८,१.१४॥

बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदामा ।
अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परि ष्वजातौ लिबुजेव वृक्षम्
॥१८,१.१५॥

(यमी का कथन) अरे यम ! तुम बहुत दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदय के भावों को समझने में मुझ से भूल हुई । क्या रस्सी द्वारा घोड़े को बाँधने के समान तथा लता द्वारा वृक्ष को आच्छादित करने के समान तुम्हें कोई अन्य स्त्री (नारी) स्पर्श कर सकती है (फिर मैं क्यों नहीं ?) ॥१८,१.१५॥

अन्यमू षु यम्यन्य उ त्वां परि ष्वजातौ लिबुजेव वृक्षम् ।
तस्य वा त्वं मन इछा स वा तवाधा कृणुष्व संविदं सुभद्राम्
॥१८,१.१६॥

(यम का कथन) हे यमी ! जब आप इस जानकारी से परिचित हैं, तो आप भी अन्य पुरुष का वृक्ष की लता के समान आश्रय ग्रहण करें, अन्य पुरुष को पतिरूप में आप स्वीकार करें, परस्पर एक दूसरे की हार्दिक इच्छाओं के अनुरूप, आचरण करें तथा उसी से अपने मंगलकारी सुख को प्राप्त करें ॥१८,१.१६॥

त्रीणि छन्दांसि कवयो वि येतिरे पुरुरूपं दर्शतं विश्वचक्षणम्
।

आपो वाता ओषधयस्तान्येकस्मिन् भुवन आर्पितानि ॥१८,१.१७॥

ज्ञानियों ने इस संसार को आच्छादित करने वाले जल, वायु और प्राण तत्त्व को निर्वाह के लिए नाना प्रकार के कार्यों में संलग्न किया है । इन तीनों में प्रत्येक, अनेक रूपों से युक्त हैं। वह अद्भुत और सबके दर्शन योग्य है। इन जल, वायु और ओषधियों को देव शक्तियों ने भूगोल में निर्वाह हेतु स्थापित किया है ॥१८,१.१७॥

वृषा वृष्णे दुदुहे दोहसा दिवः पयांसि यह्वो अदितेरदाभ्यः । विश्वं स वेद वरुणो यथा धिया स यज्ञियो यजति यज्ञियामृतून् ॥१८,१.१८॥

वर्षणशील, महिमायुक्त और अदम्य अग्निदेव ने अन्तरिक्षीय मेघों का दोहन करके यज्ञ-सम्पादक यजमानों के लिए जल बरसाया । जिस प्रकार वरुणदेव अन्तर्ज्ञान से सम्पूर्ण संसार के ज्ञाता हैं । यज्ञ में प्रयुक्त अग्निदेव की ऋचाओं के अनुरूप अर्चना करें ॥१८,१.१८॥

रपद्गन्धर्वीरप्या च योषणा नदस्य नादे परि पातु नो मनः । इष्टस्य मध्ये अदितिर्नि धातु नो भ्राता नो ज्येष्ठः प्रथमो वि वोचति ॥१८,१.१९॥

अग्निदेव की महिमा का गान करने वाली गन्धर्व-पत्नी (वाणी) और जल द्वारा शुद्ध हुई हवियों ने अग्निदेव को सन्तुष्ट किया। एकाग्रतापूर्वक स्तोत्रगान करने वाले साधकों को अखण्ड अग्निदेव यज्ञीय सत्कर्मों की ओर प्रेरित करें । यजमानों में प्रमुख, हमारे ज्येष्ठ भ्राता के समान, यज्ञ संचालक इन अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं ॥१८,१.१९॥

सो चिन्नु भद्रा क्षुमती यशस्वत्युषा उवास मनवे स्वर्वती ।
यदीमुशन्तमुशतामनु क्रतुमग्निं होतारं विदथाय जीजनन्
॥१८,१.२०॥

जब यश की कामना से साधकगण ब्राह्ममुहूर्त में यज्ञादि कर्म के लिए अग्निदेव को प्रकट करते हैं। निश्चित ही उसी समय सबका कल्याण करने वाली, पोषक तत्वों से सम्पन्न, सविता के तेज से देदीप्यमान, उषा प्रकाशित होती है ॥१८,१.२०॥

अध त्यं द्रप्सं विभ्वं विचक्षनं विराभरदिषिरः श्येनो अध्वरे ।
यदी विशो वृणते दस्ममार्या अग्निं होतारमध धीरजायत
॥१८,१.२१॥

इस (दिव्य उषा के आवरण के बाद यज्ञ प्रेरित श्येन (सुपर्ण-सूर्य द्वारा बलशाली, महिमामय, दर्शनीय सोम को समुचित मात्रा में लाया गया। जिस समय श्रेष्ठ जन, सम्मुख जाने योग्य, दर्शनीय तथा देवों के आवाहनकर्ता, अग्निदेव की स्तुति करते हैं, उसी (यज्ञ के) समय धी (बुद्धि अथवा धारण करने की क्षमता) उत्पन्न होती है ॥१८,१.२१॥

सदासि रण्वो यवसेव पुष्यते होत्राभिरग्ने मनुषः स्वध्वरः ।
विप्रस्य वा यच्छशमान उक्थ्यो वाजं ससवामुपयासि भूरिभिः
॥१८,१.२२॥

हे अग्निदेव ! पशुओं के लिए जिस प्रकार घास आदि आहार विशेष रुचिकर होते हैं, उसी प्रकार आप सदैव रमणीय होकर श्रेष्ठ यज्ञों से मनुष्यों के लिए कल्याणप्रद हों। स्तोताओं के स्तोत्रगान से प्रशंसित होकरआप हविष्यान्न ग्रहण करते हुए विभिन्न देव शक्तियों के साथ हमारे यज्ञ को सफल बनाएँ ॥१८,१.२२॥

उदीरय पितरा जार आ भगमियक्षति हर्यतो हृत्त इष्यति ।
विवक्ति वह्निः स्वपस्यते मखस्तविष्यते असुरो वेपते मती
॥१८,१.२३॥

हे अग्ने !सूर्यदेव अपने प्रकाशरूपी तेज से सर्वत्र फैलते हैं, वैसे आप भी अपने ज्वालारूपी तेज को माता पिता (पृथ्वी-आकाश) में विस्तृत करें । सन्मार्गाभिलाषी यजमान अन्त:करण से यज्ञ करने के इच्छुक हैं ।अग्निदेव स्तोत्रों को संवर्धित करते हैं तथा यज्ञकर्म में कोई त्रुटि न रह जाए, इसलिए सदैव जागरूक रहते हैं। हैं ॥१८,१.२३॥

यस्ते अग्ने सुमतिं मर्तो अख्यत्सहसः सूनो अति स प्र शृण्वे ।
इषं दधानो वहमानो अश्वैरा स द्युमाममवान् भूषति द्यून् ॥१८,१.२४॥

बल से उत्पन्न हे अग्निदेव ! जो मनुष्य आपकी सुमति को प्राप्त कर लेते हैं । वे विशेष ख्याति को प्राप्त होते हैं। अन्नादि से सम्पन्न, अश्वादि से युक्त, तेजस्-सम्पन्न और शक्तिशाली होकर वे मनुष्य दीर्घजीवन तथा सुख-सौभाग्य को प्राप्त करते हैं ॥१८,१.२४॥

श्रुधी नो अग्ने सदने सधस्थे युक्ष्वा रथममृतस्य द्रवित्नुम् ।
आ नो वह रोदसी देवपुत्रे माकिर्देवानामप भूरिह स्याः ॥१८,१.२५॥

हे अग्नेि व ! इन सम्पूर्ण देवताओं से सम्पन्न यज्ञस्थल में रहते हुए आप हमारे द्वारा की गई प्रार्थनाओं के अभिप्राय

को जानें । आप अपने अमृतवर्षक रथ को योजित करें । देव शक्तियों के माता-पिता रूप द्यावा-पृथिवी को हमारे यज्ञ में लेकर आएँ । कोई भी देव हमारे यज्ञ कर्म से असन्तुष्ट न हो, अतएव आप यहीं रहें । देवों के आतिथ्य से पृथक् न हों ॥१८,१.२५॥

यदग्न एषा समितिर्भवाति देवी देवेषु यजता यजत्र ।
रत्ना च यद्विभजासि स्वधावो भागं नो अत्र वसुमन्तं वीतात्॥१८,१.२६॥

हे स्वधायुक्त यज्ञीय अग्निदेव ! जिस अवसर पर, हम यजनीय देवताओं के लिए, प्रार्थना सम्पन्न करें तथा जिस समय आप विभिन्न प्रकार के रत्नादि द्रव्यों को यजमानों में वितरित करते हों, उस समय आप हमारे भी धनका हिस्सा हमें प्रदान करें ॥१८,१.२६॥

अन्वग्निरुषसामग्रमख्यदन्वहानि प्रथमो जातवेदाः ।
अनु सूर्य उषसो अनु रश्मीन् द्यावापृथिवी आ विवेश ॥१८,१.२७॥

अग्नेि देव सर्वप्रथम उषा और उसके बाद दिन को प्रकट करते हैं। वे ही सूर्यात्मक होकर उषा, किरण तथा द्यावा-पृथिवी में संव्याप्त हैं। सभी उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता अग्निदेव

ही इन सबमें भिन्न-भिन्न रूपों में संव्याप्त हैं। वास्तव में सूर्य भी अग्नि तत्त्व से पृथक् नहीं ॥१८,१.२७॥

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यत्प्रत्यहानि प्रथमो जातवेदाः ।
प्रति सूर्यस्य पुरुधा च रश्मीन् प्रति द्यावापृथिवी आ ततान ॥१८,१.२८॥

अग्निदेव नित्य उष:काल में प्रकाशित होते हैं तथा वे ही दिन के साथ प्रत्यक्ष प्रकट होते हैं। श्रेष्ठ, जातवेदा अग्निदेव नाना रूपों में, सूर्य की रश्मियों में भी स्वयमेव प्रकाशित होते हैं तथा द्युलोक और पृथ्वीलोक में अपना आलोक फैलाते हैं ॥१८,१.२८॥

द्यावा ह क्षामा प्रथमे ऋतेनाभिश्रावे भवतः सत्यवाचा ।
देवो यन् मर्तान् यजथाय कृण्वन्त्सीदद्धोता प्रत्यङ्स्वमसुं यन् ॥१८,१.२९॥

सत्य वचनों के द्वारा द्युलोक और पृथ्वी, यज्ञीय अवसर पर नियमानुसार अग्निदेव का आवाहन करें । तत्पश्चात् तेजस्-सम्पन्न अग्नेिदव भी यज्ञीय कर्म की ओर मनुष्यों को प्रेरित करें । वे अपनी प्रज्वलित ज्योति से अग्नि में प्रतिष्ठित होकर देवों के आवाहन के लिए उद्यत हों ॥१८,१.२९॥

देवो देवान् परिभूर्ऋतेन वहा नो हव्यं प्रथमश्चिकित्वान् ।
धूमकेतुः समिधा भाऋजीको मन्द्रो होता नित्यो वाचा यजीयान् ॥१८,१.३०॥

दिव्यगुण-सम्पन्न, देवताओं में ऋत (यज्ञ या सत्य) के प्रमुख ज्ञाता, सर्वोत्तम अग्निदेव हमारे द्वारा प्रदत्त हविष्यान्न को देवताओं के समीप पहुँचाएँ। धूम्र-ध्वजा वाले, समिधाओं द्वारा ऊर्ध्वगामी, कान्ति द्वारा उज्ज्वल, प्रशंसनीय, देवों के आवाहक, नित्य अग्निदेव को प्रार्थनापूर्वक आहुतियाँ समर्पित की जाती हैं ॥१८,१.३०॥

अर्चामि वां वर्धायापो घृतस्नू द्यावाभूमी शृणुतं रोदसी मे ।
अहा यद्देवा असुनीतिमायन् मध्वा नो अत्र पितरा शिशीताम् ॥१८,१.३१॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे यज्ञीय कर्मों को सम्पन्न करें । हे जलवर्षक द्यावापृथिवी ! हम आपकी स्तुति करते हैं। आप इस अभिप्राय को जानें । स्तोता जिस समय यज्ञ के अवसर पर आपकी प्रार्थना करते हैं, उसी समय माता-पिता रूपी पृथ्वी और द्युलोक यहाँ जल-वृष्टि करके हमारे लिए विशेष सहायक सिद्ध हों ॥१८,१.३१॥

स्वावृग्देवस्यामृतं यदी गोरतो जातासो धारयन्त उर्वी ।

विश्वे देवा अनु तत्ते यजुर्गुर्दुहे यदेनी दिव्यं घृतं वाः ॥१८,१.३२॥

अग्निदेव द्वारा सुखों को प्रदान करने वाले जल का उत्पादन होता है, उससे उत्पादित ओषधियों का द्यावा-पृथिवी द्वारा पोषण किया जाता है । हे अग्निदेव ! आपकी दीप्तिमान् ज्वालाएँ, स्वर्गस्थ दिव्य पोषक रस के रूप में जल का दोहन करती हैं। सभी देवताओं द्वारा, आपके इस जल-वृष्टि रूपी अनुदान की महिमा का गान किया जाता है ॥१८,१.३२॥

किं स्विन् नो राजा जगृहे कदस्याति व्रतं चकृमा को वि वेद ।
मित्रस्चिद्धि ष्मा जुहुराणो देवां छलोको न यातामपि वाजो अस्ति ॥१८,१.३३॥

क्या प्रज्वलित अग्निदेव हमारी प्रार्थनाओं और हविष्यान्न को ग्रहण करेंगे? क्या हमारे द्वारा उनके नियमों- व्रतों का उचित रीति से निर्वाह किया गया है? इसे जानने में कौन समर्थ है? श्रेष्ठ मित्रों को बुलाने के समान ही अग्निदेव भी हमारे आवाहन पर प्रकट होते हैं। हमारी ये प्रार्थनाएँ और हविष्यान्न देवताओं की ओर गमन करें ॥१८,१.३३॥

दुर्मन्त्वत्रामृतस्य नाम सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति ।
यमस्य यो मनवते सुमन्त्वग्ने तमृष्व पाह्यप्रयुछन् ॥१८,१.३४॥

जल इस भूमि पर अमृतस्वरूप गुणों से सम्पन्न और नानाविध रूपों में संव्याप्त है, जो यमदेव के अपराधों को क्षमा करता है । हे महिमावान्, तेजस्वी अग्निदेव ! आप इस जल का संरक्षण करें ॥१८,१.३४॥

यस्मिन् देवा विदथे मादयन्ते विवस्वतः सदने धारयन्ते ।
सूर्ये ज्योतिरदधुर्मास्यक्तून् परि द्योतनिं चरतो अजस्रा ॥१८,१.३५॥

यमराज की यज्ञवेदी (पूजावेदी) पर प्रतिष्ठित होने वाले देवगण, अग्निदेव के सान्निध्य को प्राप्त करके हर्षित होते हैं। इनके द्वारा ही सूर्य में तेजस्विता (दिवस) तथा चन्द्रमा में रात्रि को स्थापित किया गया है । ये दोनों सूर्य और चन्द्र अनवरत तेजस्विता को धारण किये हुए हैं ॥१८,१.३५॥

यस्मिन् देवा मन्मनि संचरन्त्यपीच्ये न वयमस्य विद्म ।
मित्रो नो अत्रादितिरनागान्त्सविता देवो वरुणाय वोचत्॥१८,१.३६॥

जिन ज्ञान-सम्पन्न अग्निदेव की उपस्थिति में देव शक्तियाँ अपने कार्यों का निर्वाह करती हैं। हम उनके रहस्यमय स्वरूप को जानने में असमर्थ हैं ॥१८,१.३६॥

सखाय आ शिषामहे ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे ।
स्तुष ऊ षु नृतमाय धृष्णवे ॥१८,१.३७॥

हे मित्रो ! स्तोत्रों से, वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हुए, हम उनसे आशीर्वाद की याचना करते हैं। श्रेष्ठ वीर तथा शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव की, आप सभी के कल्याण के लिए हम स्तुति करते हैं ॥१८,१.३७॥

शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा ।
मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ॥१८,१.३८॥

हे मित्र याजको ! वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त हम स्तुति पाठ करते हैं। आप भी उन रिपुसंहारके तथा महान् नायक इन्द्रदेव की भली प्रकार से प्रार्थना करें ॥१८,१.३८॥

स्तेगो न क्षामत्येषि पृथिवीं मही नो वाता इह वान्तु भूमौ ।
मित्रो नो अत्र वरुणो युजमानो अग्निर्वने न व्यसृष्ट शोकम् ॥१८,१.३९॥

जिस प्रकार वर्षाकाल में मेढ़क पृथ्वी को छोड़कर जल में छलाँग लगाता है, उसी प्रकार आप भी विस्तृत भू-भाग को लाँधकर ऊपर की ओर गमन करें । वायुदेव, अग्नि के सहयोग से हमारे निमित्त सुखकारक बनकर बहें। प्राणि-समुदाय के सखारूप मित्रदेव और वरुणदेव अग्नि द्वारा घास को पूर्णरूप से भस्मसात् करने के समान ही हमारे दुःख और कष्टों को दूर करें ॥१८,१.३९॥

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं जनानां राजानं भीममुपहत्नुमुग्रम् ।
मृडा जरित्रे रुद्र स्तवानो अन्यमस्मत्ते नि वपन्तु सेन्यम् ॥१८,१.४०॥

हे स्तोताओ ! यशस्वी रथ में विराजमान तरुण सिंह के समान भय उत्पन्न करने वाले, शत्रुसंहारक, बलशाली रुद्रदेव की स्तुति करो । हे रुद्रदेव ! आप स्तोताओं को सुखी बनाएँ तथा आपकी सेना शत्रुओं का संहार करे ॥१८,१.४०॥

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने ।
सरस्वतीं सुकृतो हवन्ते सरस्वती दाशुषे वार्यं दात्॥१८,१.४१॥

दैवी गुणों के इच्छुक मनुष्य, देवी सरस्वती का आवाहन करते हैं। यज्ञ के विस्तारित होने पर वे देवी सरस्वती की ही स्तुति करते हैं। श्रेष्ठ पुण्यात्माओं द्वारा देवी सरस्वती के आवाहन किये जाने पर, वे दानियों कीआकांक्षाओं को परिपूर्ण करती हैं ॥१८,१.४१॥

सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिना यज्ञमभिनक्षमाणाः ।
आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यस्मे
॥१८,१.४२॥

हमारे आवाहन पर दक्षिण दिशा से आने वाले सभी पितर जिन माँ सरस्वती को पाकर संतुष्ट होते हैं । वे माता सरस्वती हमारे इस पितृयज्ञ में उपस्थित हों । हम उनका आवाहन करते हैं। वे प्रसन्नतापूर्वक हमें उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने वाला अन्न प्रदान करें ॥१८,१.४२॥

सरस्वति या सरथं ययाथोक्थैः स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती ।
सहस्रार्घमिडो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानाय धेहि
॥१८,१.४३॥

हे सरस्वती देवि !जो आप स्वधायुक्त अन्न द्वारा परितृप्त होती हुई पितरजनों के साथ एक ही रथ पर आगमन करती

हैं। आप मनुष्यों को परितृप्त करने वाला अन्न भाग और वैभव-सम्पदा, हम साधकों को प्रदान करें ॥१८,१.४३॥

उदीरतामवर उत्परास उन् मध्यमाः पितरः सोम्यासः ।
असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥१८,१.४४॥

हमारे तीनों प्रकार (उत्तम, मध्यम और अधम) के पितर अनुग्रहपूर्वक इस यज्ञानुष्ठान में उपस्थित हैं। वे पुत्रों की प्राणरक्षा के उद्देश्य से यज्ञ में समर्पित हविष्यान्न ग्रहण करें तथा हमारी रक्षा करें ॥१८,१.४४॥

आहं पितॄन्त्सुविदत्रामवित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः ॥१८,१.४५॥

हमने यज्ञानुष्ठान सम्पन्न करने का विधि-विधान अपने पितरों से ही सीखा है । वे इससे भली-भाँति परिचित हैं। सभी पितर यज्ञशाला में कुश-आसन पर प्रतिष्ठित होकर हविष्यान्न एवं सोमरस ग्रहण करें ॥१८,१.४५॥

इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो ये अपरास ईयुः ।

ये पार्थिवे रजस्या निषक्ता ये वा नूनं सुवृजनासु दिक्षु ॥१८,१.४६॥

जो पितामहादि पूर्वज या उसके पश्चात् मृत्यु को प्राप्त पितरगण हैं या जो पृथ्वी के राजसी भोगों का उपभोग करने के लिए उत्पन्न हुए हैं या जो सौभाग्यवान्, वैभव-सम्पन्न बांधवों के रूप में हैं, उन सभी को नमन है ॥१८,१.४६॥

मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः ।
यांश्च देवा वावृधुर्ये च देवांस्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥१८,१.४७॥

इन्द्रदेव कव्यों से, यमदेव अंगिरसों से तथा बृहस्पतिदेव ज्ञान से, पोषण प्राप्त करके संतुष्ट होते हैं। देवों को बढ़ाने वाले वे कव्य अंगिरस् आदि पितर हमारी रक्षा करें । हम उनका आवाहन करते हैं ॥१८,१.४७॥

स्वादुष्किलायं मधुमामुतायं तीव्रः किलायं रसवामुतायम् ।
उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु ॥१८,१.४८॥

सोमरस तीक्ष्ण, मधुर एवं रुचिकर स्वाद वाला होता है । इस सोम के पीने वाले इन्द्रदेव को युद्ध में कोई जीत नहीं सकता ॥१८,१.४८॥

परेयिवांसं प्रवतो महीरिति बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् ।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा सपर्यत ॥१८,१.४९॥

विस्तृत पृथ्वी को पार करके अतिदूरस्थ लोक में ले जाने वाले, अनेक पितरजनों द्वारा चले गये मार्ग में जाने वाले विवस्वान् के पुत्र, राजा यम की हविष्यान्न समर्पित करते हुए अर्चना करें ॥१८,१.४९॥

यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेता एना जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः ॥१८,१.५०॥

यमदेव ने हमारे गमन पथ को सर्वप्रथम जाना है। उसे कोई परिवर्तित करने में सक्षम नहीं है । जिस मार्ग से हमारे पूर्वकालीन पूर्वज गये हैं, उसी मार्ग से सभी मनुष्य भी स्व-स्व कर्मों के अनुसार लक्ष्य की ओर जाएँगे । हे सर्वोत्तम यमदेव ! आप सभी मनुष्यों के पापरूपी दुष्कर्म और पुण्यरूपी सत्कर्मों को जानने में समर्थ हैं ॥१८,१.५०॥

बर्हिषदः पितर ऊत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम् ।
त आ गतावसा शंतमेनाधा नः शं योररपो दधात
॥१८,१.५१॥

हे पितृगण ! हमारे आवाहन पर उपस्थित होकर कुश-आसन पर प्रतिष्ठित हों, इनको स्वीकार कर आप हमारा हर प्रकार से कल्याण करें। पाप से बचाकर रक्षा करें ॥१८,१.५१॥

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येदं नो हविरभि गृणन्तु विश्वे ।
मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन् नो यद्व आगः पुरुषता कराम
॥१८,१.५२॥

हे पितृगण !आप हमारी रक्षा के लिए पधारें । यज्ञशाला में दक्षिण की ओर घुटनों के बल विराजमान होकर यज्ञ में समर्पित हवियों को ग्रहण करें । हमसे मानवीय भूलों के कारण जो अपराध बेन पड़े हैं, उनके कारण हमें पीड़ित न करें ॥१८,१.५२॥

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोति तेनेदं विश्वं भुवनं समेति ।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश
॥१८,१.५३॥

त्वष्टा (स्रष्ट) अपनी पुत्री (प्रकृति) को वहन करने योग्य अथवा विवाहित करते हैं। (इस प्रक्रिया में) समस्त विश्व के प्राणी सम्मिलित होते हैं । यम की माता (सरण्यू का जब सम्बन्ध हुआ, उस समय विवस्वान् (सूर्य) की महिमामयी पत्नी लुप्त हुई ॥१८,१.५३॥

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्याणैर्येना ते पूर्वे पितरः परेताः ।
उभा राजानौ स्वधया मदन्तौ यमं पश्यासि वरुणं च देवम्
॥१८,१.५४॥

हे पिता ! जिन पुरातन मार्गों से हमारे पूर्वज पितरगण गये हैं, उन्हीं से आप भी गमन करें । वहाँ स्वधारूप अमृतान्न से तृप्त होकर राजा यम और वरुणदेवों के दर्शन करें ॥१८,१.५४॥

अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै
॥१८,१.५५॥

हे दुष्ट पिशाचो ! पितरगणों ने इस मृतात्मा के लिए यह स्थान निर्धारित किया है अर्थात् दाहस्थल निश्चित किया है । अत: आप इस स्थान को त्यागकर दूर चले जाएँ । यमदेव

ने दिन-रात जल से सिञ्चित इस स्थल को मृत देहों के लिए प्रदान किया है ॥१८,१.५५॥

उशन्तस्त्वेधीमह्युशन्तः समिधीमहि ।
उशन्न् उशत आ वह पितॄन् हविषे अत्तवे ॥१८,१.५६॥

हे पवित्र यज्ञाग्ने ! हम श्रद्धापूर्वक यल करते हुए आपको प्रतिष्ठित करते हैं तथा अधिक प्रज्वलित करने का प्रयत्न करते हैं। जो देव एवं पितृगण यज्ञ की कामना करते हैं, आप उन तक समर्पित हव्य को पहुँचाते हैं ॥१८,१.५६॥

द्युमन्तस्त्वेधीमहि द्युमन्तः समिधीमहि ।
द्युमान् द्युमत आ वह पितॄन् हविषे अत्तवे ॥१८,१.५७॥

हे अग्निदेव ! हम दीप्तिमान होते हुए आपको आवाहित करते हैं, कान्तियुक्त होकर हम आपको भली प्रकार प्रज्वलित करते हैं। दीप्तिमान् होकर आप हविष्यान्न ग्रहण करने के लिए पितरगणों को साथ लेकर पधारें ॥१८,१.५७॥

अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥१८,१.५८॥

अंगिरा, अथर्वा और भृगु आदि हमारे पितरगण अभी-अभी पधारे हैं। वे सभी सोम के इच्छुक हैं। उन पितरगणों की कृपादृष्टि में उपलब्ध हो, हम उनके अनुग्रह से कल्याणकारी मार्ग की ओर बढ़े ॥१८,१.५८॥

अङ्गिरोभिर्यज्ञियैरा गहीह यम वैरूपैरिह मादयस्व ।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन् बर्हिष्या निषद्य
॥१८,१.५९॥

हे यमदेव ! आप विरूप ऋषि के वंश में उत्पन्न हुए अंगिरादि पूजनीय पितरजनों (पूर्वजों) के साथ यहाँ पधारें और यज्ञ में परितृप्ति प्राप्त करें। आपके साथ पिता विवस्वान् को भी आवाहित करते हैं। वे भी इस यज्ञ में पहुँचकर फैलाये गये कुशा के आसन पर बैठे। आप दोनों हविष्यान्न को ग्रहण करके आनंदित हों ॥१८,१.५९॥

इमं यम प्रस्तरमा हि रोहाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः ।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषो मादयस्व
॥१८,१.६०॥

हे यमदेव ! अंगिरादि पितरजनों सहित आप हमारे इस उत्तम यज्ञ में आकर विराजमान हों । ज्ञानी ऋत्विजों के स्तोत्र आपको आमंत्रित करें । हे मृत्युपति यम ! इन

आहुतियों से तृप्त होकर आप हमें आनन्दित करें ॥१८,१.६०॥

इत एत उदारुहन् दिवस्पृष्ठान्वारुहन् ।
प्र भूर्जयो यथा पथा द्यामङ्गिरसो ययुः ॥१८,१.६१॥

यहाँ से पितरगण ऊर्ध्वलोक की ओर प्रस्थान करते हैं। तत्पश्चात् उन्हें दिव्यलोक के उपभोग्य स्थानों पर प्रतिष्ठापित किया जाता है । जिस मार्ग से भूमि पर विजयश्री प्राप्त करने वाले आंगिरस आदि पूर्वज गये हैं, उसी मार्ग से अन्य पितर भी दिव्यलोक में पहुँचते हैं ॥६१॥

॥अथर्ववेद – अष्टादशं काण्डम्॥

सूक्त २ – पितृमेध सूक्त

यम आदि की स्तुति, जातवेद अग्नि को स्तुति, प्रेत का वर्णन, कुत्तों के यमपुर के रक्षक होने का विषय, अनंत द्रष्टा ऋषि सूर्य के पुत्र यम, यम का वचन, श्मशान भूमि तथा मृतक की श्राद्ध का विषय

यमाय सोमः पवते यमाय क्रियते हविः ।
यमं ह यज्ञो गछत्यग्निदूतो अरंकृतः ॥१८,२.१॥

(ऋषिगण) यम (देवता अथवा अनुशासन के निमित्त (यज्ञ में) सोम का अभिषव करते हैं । आहुतियाँ वे यमदेव को समर्पित करते हैं। सोम और हवियों से अलंकृत अग्निदेव को दूत बनाकर यज्ञदेव यम की ओर (निकट) ही जाते हैं ॥१८,२.१॥

यमाय मधुमत्तमं जुहोता प्र च तिष्ठत ।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः ॥१८,२.२॥

हे ऋत्विजो ! आप यमदेव के निमित्त अति मधुर आहुतियाँ प्रदान करें और प्रतिष्ठा भी यम के लिए समर्पित करें। इस

प्रकार पूर्वकालीन पितृलोक के मार्ग को विनिर्मित करने वाले मंत्रद्रष्टा ऋषियों को नमन करें ॥१८,२.२॥

यमाय घृतवत्पयो राज्ञे हविर्जुहोतन ।
स नो जीवेष्वा यमेद्दीर्घमायुः प्र जीवसे ॥१८,२.३॥

हे त्वजो ! यमराज के निमित्त घृतयुक्त खीर को हविरूष में समर्पित करें। वे हविष्यान्न को स्वीकार करके हमारे जीवन को संरक्षित करते हुए हमें शतायु प्रदान करें ॥१८,२.३॥

मैनमग्ने वि दहो माभि शूशुचो मास्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।
शृतं यदा करसि जातवेदोऽथेमेनं प्र हिणुतात्पितृंरुप ॥१८,२.४॥

हे अग्ने ! इस मृतात्मा को पीड़ित किये बिना (अन्त्येष्टि) संस्कार सम्पन्न करें। इस मृतात्मा को छिन्न-भिन्न न करें । हे सर्वज्ञदेव !जब आपकी ज्वालाएँ इस देह को भस्मीभूत कर दें, तभी इसे पितरगणों के समीप भेज दें॥१८,२.४॥

यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेममेनं परि दत्तात्पितृभ्यः ।
यदो गछात्यसुनीतिमेतामथ देवानां वशनीर्भवाति ॥१८,२.५॥

हे सर्वज्ञ अग्निदेव ! जब आप मृत शरीर को पूर्णरूप से दग्ध कर दें, तब इस मृतात्मा को पितरजनों को समर्पित करें । जब यह मृतात्मा पुनः प्राणधारी हो, तो देवाश्रय में ही रहे ॥१८,२.५॥

त्रिकद्रुकेभिः पवते षडुर्वीरेकमिद्बृहत्।
त्रिष्टुब्गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आर्पिता ॥१८,२.६॥

एक यम ही त्रिकद्रुक (ज्योति, गौ और आयु) नामक यज्ञ में संव्याप्त हैं । वे यमदेव छह स्थानों (द्युलोक, भूलोक, जल, ओषधियों, ऋक् और सूनृत) में निवास करने वाले हैं। त्रिष्टुप् , गायत्री एवं दूसरे सभी छन्दों के माध्यम से हम उनका स्तुतिगान करते हैं ॥१८,२.६॥

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः ।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः ॥१८,२.७॥

हे मृत मनुष्य ! आपके प्राण और नेत्र वायु और सूर्य से संयुक्त हों । आप अपने पुण्य कर्मों के फल की प्राप्ति के लिए स्वर्ग, पृथ्वी अथवा जल में निवास करें। यदि वृक्ष-

वनस्पतियों में आपका कल्याण निहित है, तो सूक्ष्म शरीर से उन्हीं में आप प्रवेश करें ॥१८,२.७॥

अजो भागस्तपसस्तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः ।
यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतामु लोकम् ॥१८,२.८॥

हे अग्निदेव ! इस मृत पुरुष में जो अविनाशी ईश्वरीय अंश है, उसे आप अपने तेज से तपाएँ, प्रखर बनाएँ। आपकी ज्वालाएँ उसे सुदृढ़ बनाएँ । हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! आप अपनी कल्याणकारी विभूतियों से उन्हें पुण्यात्माओं के लोक में ले जाएँ ॥१८,२.८॥

यास्ते शोचयो रंहयो जातवेदो याभिरापृणासि दिवमन्तरिक्षम् ।
अजं यन्तमनु ताः समृण्वतामथेताभिः शिवतमाभिः शृतं कृधि ॥१८,२.९॥

हे सर्वज्ञ अग्निदेव ! आपकी जो पवित्र एवं तीव्रगामी ज्वालाएँ हैं, जिससे आप लोक और अन्तरिक्ष लोक में संव्याप्त हो जाते हैं, उन ज्वालाओं से आप इस अज़ भाग (आत्मा) को प्राप्त हों । दूसरी मंगलमय ज्वालाओं से इस मृत देह को हवि के समान ही पूर्णतया भस्मीभूत करें ॥१८,२.९॥

अव सृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधावान् ।
आयुर्वसान उप यातु शेषः सं गछतां तन्वा सुवर्चाः
॥१८,२.१०॥

हे अग्निदेव ! जो मृतदेह आहुति रूप में आपको समर्पित की गयी है; जो हमारे द्वारा प्रदत्त स्वधान्न से युक्त होकर आपमें गतिशील है, उसे आप पुनः पितृलोक के लिए मुक्त करें । इसकी संतानें दीर्घायु प्राप्त करती हुईं गृहकी ओर लौट जाएँ। यह श्रेष्ठ तेजस्विता युक्त और पितृलोक में आश्रय योग्य शरीर प्राप्त करें ॥१८,२.१०॥

अति द्रव श्वानौ सारमेयौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा ।
अधा पितॄन्त्सुविदत्रामपीहि यमेन ये सधमादं मदन्ति
॥१८,२.११॥

हे मृतात्मा ! चार नेत्रों वाले, अद्‌भुत स्वरूप वाले, जो ये दो सारमेय (सरमा के पुत्र अथवा साथ रमण करने वाले) आन हैं, इनके सान्निध्य में आप गमन करें । तदनन्तर जो पितरगण यम के साथ सदैव हर्षित रहते हैं, उन विशिष्ट ज्ञानी पितरों का सान्निध्य भी आप प्राप्त करें ॥१८,२.११॥

यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिषदी नृचक्षसा ।

ताभ्यां राजन् परि धेह्येनं स्वस्त्यस्मा अनमीवं च धेहि ॥१८,२.१२॥

हे मृत्युदेव यम ! आपके गृहरक्षक, मार्गरक्षक तथा ऋषियों द्वारा ख्यातिप्राप्त चार नेत्रों वाले जो दो श्वास हैं, उनसे मृतात्मा को संरक्षित करें तथा इस मृतात्मा को कल्याण का भागी बनाकर पापकर्मों से मुक्त करे ॥१८,२.१२॥

उरूणसावसुतृपावुदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनामनु ।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम् ॥१८,२.१३॥

यमदेव के ये दो दूत (कुक्कु) लम्बी नाक वाले, प्राणहन्ता और अति सामर्थ्यवान् हैं। ये मनुष्यों के प्राणहरण का लक्ष्य लेकर घूमते हैं। दोनों (यमदूतो हमें सूर्य दर्शन लाभ के लिए इस स्थान पर कल्याणकारी प्राणदान देने की कृपा करें ॥१८,२.१३॥

सोम एकेभ्यः पवते घृतमेक उपासते ।
येभ्यो मधु प्रधावति तांश्चिदेवापि गछतात्॥१८,२.१४॥

किन्हीं पितरजनों के निमित्त सोमरस उपलब्ध रहता है और कोई घृताहुति का सेवन करते हैं । हे प्रेतात्मन् ! जिनके

लिए मधुर रस की धारा प्रवाहित होती है, आप उन्हीं के समीप पहुँचें ॥१८,२.१४॥

ये चित्पूर्व ऋतसाता ऋतजाता ऋतावृधः ।
ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजामपि गछतात्॥१८,२.१५॥

पूर्वकालीन जो पुरुष सत्य का पालन करने वाले और सत्यरूप यज्ञ के संवर्द्धक थे, तप: ऊर्जा से अनुप्राणित उन अतीन्द्रिय द्रष्टा ऋषियों के समीप ही यमदेव के अनुशासन से युक्त यह मृतात्मा भी पहुँचे ॥१८,२.१५॥

तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।
तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चिदेवापि गछतात्॥१८,२.१६॥

जो तपश्चर्या के प्रभाव से किसी भी प्रकार पराभूत नहीं हो सकते, जो तपश्चर्या के कारण स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं तथा जिन्होंने कठिन तप- साधना सम्पन्न की है; हे प्रेतात्मन् ! आप उन्हीं के समीप जाएँ ॥१८,२.१६॥

ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो ये स्वर्तनूत्यजः ।
ये वा सहस्रदक्षिणास्तां चिदेवापि गछतात्॥१८,२.१७॥

हे प्रेत ! जो शूरवीर संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देकर वीरगति को प्राप्त हुए हैं अथवा जो लोग अनेकों प्रकार के दान देकर अपनी कीर्ति से इस संसार में अमर हो गये हैं। आप उन लोगों के समीप पहुँचें ॥१८,२.१७॥

सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम् ।
ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजामपि गच्छतात्॥१८,२.१८॥

जिन पूर्वज मनीषियों ने जीवन की हजारों श्रेष्ठ विधाओं को विकसित किया । जो सूर्य की शक्तियों के संरक्षक हैं और तप से उत्पन्न जिन पितरों ने तपस्वी जीवन जिया, हे मृतात्मन् ! आप उन्हीं के समीप पहुँचें ॥१८,२.१८॥

स्योनास्मै भव पृथिव्यनृक्षरा निवेशनी ।
यछास्मै शर्म सप्रथाः ॥१८,२.१९॥

हे पृथिवी देवि ! आप इसके निमित्त सुखकारिणी, दुःख-कष्टों से रहित, प्रवेश करने योग्य और विस्तारयुक्त होकर शान्ति प्रदान करने वाली हों ॥१८,२.१९॥

असंबाधे पृथिव्या उरौ लोके नि धीयस्व ।
स्वधा याश्चकृषे जीवन् तास्ते सन्तु मधुश्चुतः ॥१८,२.२०॥

हे मुमूर्षों ! आपने यज्ञवेदी रूप विस्तृत दर्शनीय स्थल पर स्थित होकर सर्वप्रथम पितरों और देवों के लिए जिन स्वधायुक्त आहुतियों को समर्पित किया था, वे आपको मधु आदि रसों के प्रवाहरूप में उपलब्ध हों ॥१८,२.२०॥

ह्वयामि ते मनसा मन इहेमान् गृहामुप जुजुषाण एहि ।
सं गछस्व पितृभिः सं यमेन स्योनास्त्वा वाता उप वान्तु शग्माः ॥१८,२.२१॥

हे प्रेतपुरुष ! अपने मन से आपके मन को हम बुलाते हैं । (जहाँ पितृकर्म किया जाता हैं, आप उन गृहों में आगमन करें। (संस्कार क्रिया के पश्चात् पिता, पितामह और प्रपितामह के साथ (सपिण्डीकरण के द्वारा संयुक्त होकर यमराज के समीप प्रस्थान करें, सुखप्रद वायुदेव आपके लिए बहते रहें ॥१८,२.२१॥

उत्त्वा वहन्तु मरुत उदवाहा उदप्रुतः ।
अजेन कृण्वन्तः शीतं वर्षेणोक्षन्तु बालिति ॥१८,२.२२॥

हे प्रेत पुरुष ! मरुद्गण आपको अन्तरिक्ष में धारण करें अथवा वायुदेव आपको ऊपरी लोक में पहुँचाएँ। जल के धारणकर्ता और वर्षक मेघ गर्जना करते हुए समीपस्थ अज के साथ तुम्हें वृष्टिजल से सिञ्चित करें ॥१८,२.२२॥

उदह्वमायुरायुषे क्रत्वे दक्षाय जीवसे ।
स्वान् गच्छतु ते मनो अधा पितॄंरुप द्रव ॥१८,२.२३॥

(हे पितरो !) हम आपको दीर्घायु, प्राण, अपान तथा जीवन के लिए आमंत्रित करते हैं। तुम्हारा मन संस्कार क्रिया से प्रकट हुए नये शरीर को उपलब्ध करे । इसके बाद आप वसुरूप पितरगणों के समीप पहुँचें ॥१८,२.२३॥

मा ते मनो मासोर्माङ्गानां मा रसस्य ते ।
मा ते हास्त तन्वः किं चनेह ॥१८,२.२४॥

(हे पितरो !) इस संसार में वास करते हुए तुम्हारा मन तुम्हें त्याग कर न जाए। तुम्हारे प्राण का कोई भी अंश क्षीण न हो और तुम्हारे हाथ-पैर आदि में कोई विकार उत्पन्न न हो। आपकी देह के रुधिर आदि रस भी किसी मात्रा में देह का परित्याग न करें । इस लोक में कोई भी शारीरिक अंग आपसे पृथक् न हों ॥१८,२.२४॥

मा त्वा वृक्षः सं बाधिष्ट मा देवी पृथिवी मही ।
लोकं पितृषु वित्त्वैधस्व यमराजसु ॥१८,२.२५॥

(हे पितर पुरुष !) जिस पेड़ के नीचे आप आराम करें , वह पेड़ आपके लिए बाधक न हो। आप जिस दिव्य गुण सम्पन्न पृथ्वी का आश्रय लें, वह भी आपको व्यथित न करे । यमदेव जिनके राजा हैं, उन पितरजनों में स्थान प्राप्त करके आप वृद्धि को प्राप्त करें ॥१८,२.२५॥

यत्ते अङ्गमतिहितं पराचैरपानः प्राणो य उ वा ते परेतः ।
तत्ते संगत्य पितरः सनीडा घासाद्घासं पुनरा वेशयन्तु ॥१८,२.२६॥

हे प्रेतात्मन् ! जो अंग आपके शरीर से पृथक् हो चुका है तथा जो अपान आदि सप्तप्राण दुबारा प्रवेश न करने के लिए शरीर से बाहर जा चुके हैं, उन सबको आपके साथ निवास करने वाले पितरगण घास से घास को बाँधने के समान दूसरे शरीर में प्रविष्ट कराएँ ॥१८,२.२६॥

अपेमं जीवा अरुधन् गृहेभ्यस्तं निर्वहत परि ग्रामादितः ।
मृत्युर्यमस्यासीद्दूतः प्रचेता असून् पितृभ्यो गमयां चकार ॥१८,२.२७॥

हे प्राणधारी बन्धुगण ! इस प्रेतात्मा को घर से बाहर ले जाएँ। इस मृत देह को उठाकर ग्राम से बाहर ले जाएँ, क्योंकि श्रेष्ठ ज्ञान सम्पन्न, यमराज के दूत मृत्यु ने इस मृत पुरुष के

प्राणों को पितरजनों में प्रविष्ट कराने के लिए प्राप्त कर लिया है ॥१८,२.२७॥

ये दस्यवः पितृषु प्रविष्टा ज्ञातिमुखा अहुतादश्चरन्ति ।
परापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्टान् अस्मात्प्र धमाति यज्ञात्॥१८,२.२८॥

जो दुष्ट प्रेतात्मा ज्ञानवानों के समान आकृति बनाकर पिता, पितामह और प्रपितामह आदि पितरों में घुसपैठ करते हैं और आहुति प्रदान करने पर छल से उस हविष्यान्न का सेवन करते हैं, जो पिण्डदान करने वाले पुत्र-पौत्रों को विनष्ट कर डालते हैं, हे अग्निदेव ! पितरों के लिए किये जाने वाले इस यज्ञ से प्रसन्न होकर आप उन छद्म वेशधारी असुरों को बाहर करें ॥१८,२.२८॥

सं विशन्त्विह पितरः स्वा नः स्योनं कृण्वन्तः प्रतिरन्त आयुः ।
तेभ्यः शकेम हविषा नक्षमाणा ज्योग्जीवन्तः शरदः पुरूचीः ॥१८,२.२९॥

इस यज्ञ में हमारे गोत्र में उत्पन्न पिता, पितामह, प्रपितामह आदि पितरगण, भली प्रकार प्रतिष्ठित हों, वे हमें सुख-समृद्धि के साथ दीर्घजीवन प्रदान करें। वृद्धि प्राप्त करते

हुए हम उन पितरों को हविष्यान्न समर्पित करते हैं, वे हमें दीर्घायुष्य का सुख प्रदान करें ॥१८,२.२९॥

यां ते धेनुं निपृणामि यमु क्षीर ओदनम् ।
तेना जनस्यासो भर्ता योऽत्रासदजीवनः ॥१८,२.३०॥

हे मृतात्मन् ! हम आपके निमित्त जिस गौ का दान करते हैं तथा दूध मिश्रित जिस भात को समर्पित करते हैं, उस भाग द्वारा आप यमलोक में अपने जीवन को परिपुष्ट करें ॥१८,२.३०॥

अश्वावतीं प्र तर या सुशेवा क्षांकं वा प्रतरं नवीयः ।
यस्त्वा जघान वध्यः सो अस्तु मा सो अन्यद्विदत भागधेयम् ॥१८,२.३१॥

हे प्रेत पुरुष ! आप हमें अश्वावती नदी से पार उतारें; यह नदी हमारे लिए सुखप्रदायिनी हो। हम रीछ आदि हिंसक पशुओं से परिपूर्ण निर्जन वन- प्रदेश को पार करें । हे प्रेत ! जिसने तुम्हारा संहार किया है, वह पुरुष वध योग्य है । वह पापी पुरुष पूर्व में उपभोग किये गये पदार्थों के अतिरिक्त दूसरी उपभोग्य सामग्री को प्राप्त करने में सक्षम न हो ॥१८,२.३१॥

यमः परोऽवरो विवस्वान् ततः परं नाति पश्यामि किं चन ।
यमे अध्वरो अधि मे निविष्टो भुवो विवस्वान् अन्वाततान
॥१८,२.३२॥

सूर्य के पुत्र यमदेव अपने पिता सूर्य से भी अधिक तेजस्वी हैं । हम किसी भी प्राणी को यमराज से उत्कृष्ट नहीं मानते। हमारे यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों की सफलता यमदेव के अनुग्रह पर ही आधारित है। यज्ञ की सफलता के लिए सूर्यदेव ने अपनी किरणों से भूमण्डल को प्रकाशित किया है ॥१८,२.३२॥

अपागूहन्न् अमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वा सवर्णामदधुर्विवस्वते ।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः
॥१८,२.३३॥

मरणधर्मा मनुष्यों से देवों ने अपने अमरत्व को छिपा लिया। उन्होंने) सूर्यदेव के लिए समान वर्णयुक्त स्त्री बनाकर प्रदान की। सरयू ने घोड़ी की आकृति धारण करके अश्विनीकुमारों का भरण-पोषण किया। त्वष्टा की कन्या सरयू ने सूर्यदेव के घर का त्याग करते समय स्त्री- पुरुष (यम-यमी) के जोड़े को वहीं पर छोड़ दिया था ॥१८,२.३३॥

ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धिताः ।

सर्वांस्तान् अग्न आ वह पितॄन् हविषे अत्तवे ॥१८,२.३४॥

हे अग्निदेव ! आप उन सभी पितरजनों के हवि सेवनाएँ आएँ, जो भूमि में गाड़ने, खुली हवा या एकान्त स्थल में छोड़ देने अथवा अग्नि दहन द्वारा अन्त्येष्टि संस्कार के विधान से संस्कारित हुए हों तथा जो संस्कार क्रिया के पश्चात् ऊपरी पितृलोक में विराजमान हों ॥१८,२.३४॥

ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।
त्वं तान् वेत्थ यदि ते जातवेदः स्वधया यज्ञं स्वधितिं जुषन्ताम्
॥१८,२.३५॥

अग्नि संस्कार अथवा अग्निरहित संस्कारयुक्त जो पितरगण स्वधा प्रक्रिया द्वारा द्युलोक में सुखपूर्वक स्थित हैं, हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! आप उन सभी पितरों को उनकी सन्तानों द्वारा किये जाने वाले पितृयज्ञ में लेकरआएँ ॥१८,२.३५॥

शं तप माति तपो अग्ने मा तन्वं तपः ।
वणेषु शुष्मो अस्तु ते पृथिव्यामस्तु यद्धरः ॥१८,२.३६॥

हे अग्निदेव ! प्रेतदेह को जिस प्रकार सुख प्राप्त हो, उसी प्रकार उसे भस्मीभूत करें । आपकी शोषण करने वाली

लपटें वन की ओर प्रस्थान करें और आपका जो रस को हरने वाला तेज है, वह पृथ्वी में ही रहे ॥१८,२.३६॥

ददाम्यस्मा अवसानमेतद्य एष आगन् मम चेदभूदिह ।
यमश्चिकित्वान् प्रत्येतदाह ममैष राय उप तिष्ठतामिह ॥१८,२.३७॥

यम का कथन-यदि यह आने वाला पुरुष हमारी सेवा में संलग्न रहे, तो हम इसे आश्रय स्थल प्रदान कर दें, क्योंकि यह पुरुष हमारे पास आया है, ऐसा मानने वाले यमदेव मृतात्मा से पुन: कहते हैं कि यह मृतपुरुष हमारी अर्चना करते हुए समीप रहे ॥३१८,२.७॥

इमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.३८॥

हम इस (जीवन काल) की मात्रा इस प्रकार नापते (तय करते हैं, जैसे पहले किसी अन्य ने इसे नहीं नापा हो । सौ शरद् ऋतुओं से पूर्व हमारी जीवन यात्रा समाप्त न हो ॥१८,२.३८॥

प्रेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.३९॥

हम इस (जीवनकाल) की मात्रा को भली प्रकार नापते हैं, जिससे सौ वर्ष से पूर्व बीच में दूसरा श्मशान कर्म हमें प्राप्त न हो ॥१८,२.३९॥

अपेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४०॥

हम इस (जीवन की मात्रा का दोष हटाकर नापते हैं, जिससे हमें सौ वर्ष से पूर्व मध्य में दूसरा मृत कर्म न करना पड़े ॥१८,२.४०॥

वीमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४१॥

हम इस (जीवन की) मात्रा को विशेष प्रकार से नापते हैं, जिससे हमें सौ वर्ष से पूर्व दूसरा मृत कर्म न करना पड़े ॥१८,२.४१॥

निरिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४२॥

हम इस (जीवन की मात्रा को निश्चित रूप से नापते हैं, जिससे हमारे सामने सौ वर्षों के बीच कोई दूसरा श्मशान कर्म करने की स्थिति न आए ॥१८,२.४२॥

उदिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४३॥

हम इस (जीवन) की मात्रा को उत्तम ढंग से नापते हैं, जिससे सौ वर्ष से पूर्व दूसरा श्मशान कर्म करने की स्थिति न बन सके ॥१८,२.४३॥

समिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै ।
शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४४॥

हम इस (जीवन) की मात्रा को सम्यक् रूप से नापते हैं, जिससे सौ वर्ष से पहले दूसरे श्मशान कर्म करने की आवश्यकता न हो ॥१८,२.४४॥

अमासि मात्रां स्वरगामायुष्मान् भूयासम् ।
यथापरं न मासातै शते शरत्सु नो पुरा ॥१८,२.४५॥

हम इस (जीवन) की मात्रा को नापे, सुख प्राप्त करें और दीर्घायु बनें । हमने पूर्वोक्त विधि से श्मशान भूमि को नाप

लिया, उस नाप के आधार पर हम इस मृतक को स्वर्ग भेज चुके हैं, उसी सत्कर्म के प्रभाव से हम सौ वर्ष की आयु से सम्पन्न हों । हमें सौ वर्ष से पूर्व श्मशान कर्म न करना पड़े ॥१८,२.४५॥

प्राणो अपानो व्यान आयुश्चक्षुर्दृशये सूर्याय ।
अपरिपरेण पथा यमराज्ञः पितॄन् गच्छ ॥१८,२.४६॥

प्राण, अपान, व्यान, आयु और नेत्र ये सभी सूर्य के दर्शनार्थ अर्थात् संसार में जीवन धारण करने के निमित्त हों । हे मनुष्यो ! आयु की पूर्णता पर देहावसान की अवस्था में आप यमराज के कुटिलतारहित सरल मार्ग से पितरों को प्राप्त करें ॥१८,२.४६॥

ये अग्रवः शशमानाः परेयुर्हित्वा द्वेषांस्यनपत्यवन्तः ।
ते द्यामुदित्याविदन्त लोकं नाकस्य पृष्ठे अधि दीध्यानाः ॥४१८,२.७॥

जो अग्रगामी, प्रशंसनीय, सन्ततिरहित मनुष्य द्वेष भावों को त्याग करके दिवंगत हुए हैं, वे अन्तरिक्ष को लाँघकर, दुःखों से रहित, स्वर्ग के ऊपरी भाग को प्राप्त करते हुए पुण्यफलों का उपभोग करते हैं ॥१८,२.४७॥

उदन्वती द्यौरवमा पीलुमतीति मध्यमा ।
तृतीया ह प्रद्यौरिति यस्यां पितर आसते ॥१८,२.४८॥

उदन्वती (जलयुक्त) द्युलोक सबसे नीचे है, पीलुमती (नक्षत्र मण्डल वाला) मध्य में हैं, उससे ऊपर जो तीसरा प्रद्यौ नाम से प्रख्यात है, वहीं पितर निवास करते हैं ॥१८,२.४८॥

ये न पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुरुर्वन्तरिक्षम् ।
य आक्षियन्ति पृथिवीमुत द्यां तेभ्यः पितृभ्यो नमसा विधेम ॥१८,२.४९॥

हम अपने पिता के पितरों, पितामह आदि, विशाल अन्तरिक्ष, द्युलोक और पृथ्वी पर वास करने वाले सभी पितरों को स्वधापूर्वक हव्य प्रदान करते हैं । नमन करते हुए उनकी पूजा अर्चना करते हैं ॥१८,२.४९॥

इदमिद्वा उ नापरं दिवि पश्यसि सूर्यम् ।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥१८,२.५०॥

हे मृतात्मन् ! आप द्युलोक में जो सूर्य देखते हैं, वहीं आपका (स्थान) हैं, कोई अन्य नहीं । हे पृथ्वी देवि ! आप उसी प्रकार इस मृत पुरुष को अपने तेज से आच्छादित

करें, जिस प्रकार माता अपने पुत्र कोआच्छादित रखती हैं ॥१८,२.५०॥

इदमिद्वा उ नापरं जरस्यन्यदितोऽपरम् ।
जाया पतिमिव वाससाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥१८,२.५१॥

वृद्धावस्था के बाद शरीर के लिए यही (अन्त्येष्टि) कार्य शेष रह जाता है, दूसरा अन्य कार्य नहीं । अतएव हे भूमे ! आप इस (शव) को ऐसे ढक लें, जिस प्रकार पत्नी अपने वस्त्र से मृतक पति के शरीर को ढक लेती है ॥१८,२.५१॥

अभि त्वोर्णोमि पृथिव्या मातुर्वस्त्रेण भद्रया ।
जीवेषु भद्रं तन् मयि स्वधा पितृषु सा त्वयि ॥१८,२.५२॥

हे मृतक ! हम तुम्हें पृथ्वी माता के मंगलकारी वस्त्र से आच्छादित करते हैं । इस लोक में जो कल्याणमय है, उसे हम प्राप्त करें तथा पितृलोक में (परलोक में) जो स्वधान्न है, उसे आप (मृतात्मा) प्राप्त करें ॥१८,२.५२॥

अग्नीषोमा पथिकृता स्योनं देवेभ्यो रत्नं दधथुर्वि लोकम् ।
उप प्रेष्यन्तं पूषणं यो वहात्यज्ञोयानैः पथिभिस्तत्र गछतम् ॥१८,२.५३॥

हे अग्नि और सोम देवो ! आप पुण्यलोक में जाने के लिए मार्ग का निर्माण करने वाले हैं। देवताओं ने पुण्यात्माओं के लिए साधन- सम्पन्न स्वर्गलोक की रचना की है। जो लोक सूर्यदेव के समीपस्थ हैं, इस प्रेतात्मा को उसी लोक में सुगमतापूर्वक पहुँचाने का अनुग्रह करें ॥१८,२.५३॥

पूषा त्वेतश्च्यावयतु प्र विद्वान् अनष्टपशुर्भुवनस्य गोपाः ।
स त्वैतेभ्यः परि ददत्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रियेभ्यः
॥१८,२.५४॥

हे मृतात्मन् ! जगत् को प्रकाशित करने वाले, सभी को पोषण देने वाले, हमारे पशुओं को विनाश से बचाने वाले पूषा देवता तुम्हें पृथ्वी लोक से ऊर्ध्व लोक की ओर अन्य पितरों के समीप ले जाएँ । अग्निदेव तुम्हे ऐश्वर्यशाली देवताओं तक पहुँचाएँ ॥१८,२.५४॥

आयुर्विश्वायुः परि पातु त्वा पूषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात्।
यत्रासते सुकृतो यत्र त ईयुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु
॥१८,२.५५॥

हे प्रेतात्मन् ! जीवन के अधिष्ठाता देव 'आयु' आपके संरक्षक हों । पूषादेव पूर्व दिशा की ओर जाने वाले मार्ग में आपके संरक्षक हों । जहाँ पुण्यात्माएँ निवास करती हैं, उस

पुण्यलोक के श्रेष्ठ भाग में सर्वप्रेरक सवितादेःआपको प्रतिष्ठित करें ॥१८,२.५५॥

इमौ युनज्मि ते वह्नी असुनीताय वोढवे ।
ताभ्यां यमस्य सादनं समितिश्चाव गछतात्॥१८,२.५६॥

हे मृतात्मन् ! हम तुम्हारे प्राणरहित शरीर को ले जाने के लिए भार खींचने वाले दो बैलों को बैलगाड़ी में जोतते हैं। इन बैलों से आप भली प्रकार यमराज के गृह को प्राप्त करें ॥१८,२.५६॥

एतत्त्वा वासः प्रथमं न्वागन्न् अपैतदूह यदिहाबिभः पुरा ।
इष्टापूर्तमनुसंक्राम विद्वान् यत्र ते दत्तं बहुधा विबन्धुषु ॥१८,२.५७॥

हे मृत पुरुष ! जिस वस्त्र को आप पहले धारण किया करते थे, उस वस्त्र का परित्याग करके श्मशान के नवोन वस्त्र को धारण करें। जिन इच्छाओं की पूर्णता के लिए आपने सगे-सम्बंधियों को धन- सम्पदा प्रदान की थी, उसे जानते हुए उसके फल को प्राप्त करें ॥१८,२.५७॥

अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व मेदसा पीवसा च ।

नेत्त्वा धृष्णुर्हरसा जर्हृषाणो दधृग्विधक्षन् परीङ्खयातै ॥१८,२.५८॥

हे मृतात्मन् ! आप गौ (वाणियों-वेदमंत्रों अथवा इन्द्रियों से प्रज्वलित) अग्नि से स्वयं को भली प्रकार आवृत कर लें । वह (अग्नि) तुम्हारे स्थूल मेद आदि को अच्छादित करे । इस प्रकार तेजोमय तथा हर्षित अग्निदेव (तुम्हारी काया को) दग्ध करते हुए उसे इधर-उधर बिखेरेंगे नहीं ॥१८,२.५८॥

दण्डं हस्तादाददानो गतासोः सह श्रोत्रेण वर्चसा बलेन ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा विश्वा मृधो अभिमातीर्जयेम ॥१८,२.५९॥

हे जीवात्मन् ! जो चला गया है, उसके हाथ से दण्ड, श्रवण-सामर्थ्य, वर्चस् तथा बल लेकर आप यहीं रहें । हम वहाँ भली प्रकार सुखी रहते हुए समस्त संग्रामों और अहंकारी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें ॥१८,२.५९॥

धनुर्हस्तादाददानो मृतस्य सह क्षत्रेण वर्चसा बलेन ।
समागृभाय वसु भूरि पुष्टमर्वाङ्त्वमेह्युप जीवलोकम् ॥१८,२.६०॥

मृत (राजा या क्षत्रिय) के हाथ से धनुष को धारण करते हुए क्षात्र धर्म की असाधारण तेजस्विता और सामर्थ्य-शक्ति से सम्पन्न बने । प्रचुर धन- सम्पदा को हमारे पोषण के लिए आप ग्रहण करें। इस प्रकार सम्पदा से परिपूर्ण होकर जीवलोक में हमारे सम्मुख उपस्थित हों ॥१८,२.६०॥

॥अथर्ववेद – अष्टादशं काण्डम्॥

सूक्त ३ – पितृमेध सूक्त

यम की स्तुति, काई और बेंत में जल का सार, अग्नियों का वर्णन, प्रेत का वर्णन पित याग नामक कर्म, अग्नियों का वर्णन, महर्षियों से सुख की कामना देवमाता अदिति तथा भू देवता की प्रशंसा, शीतकारिणी जड़ीबूटियां और मंडूकपर्णी औषधि से व्याप्त पृथ्वी, वनस्पति में अस्थिरूप पुरुष ढांचे का वर्णन

इयं नारी पतिलोकं वृणाना नि पद्यत उप त्वा मर्त्य प्रेतम् ।
धर्मं पुराणमनुपालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि ॥१८,३.१॥

हे मृत मनुष्य ! यह नारी पतिकुल (के हितों की अभिलाषा करती हुई स्वधर्म का निर्वाह करने हेतु आपके निकट आई है । धर्म में निरत इस नारी के लिए संसार में पुत्र, पौत्रादि श्रेष्ठ संतानें और धन-संपदा प्रदान करें ॥१८,३.१॥

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतमुप शेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ ॥१८,३.२॥

हे नारी ! तू मृत पति के समीप ही सो रही है, यह उचित नहीं । इसे छोड़कर तुम इस संसार की ओर चलो । यहाँ पाणिग्रहण के बाद तुम्हारी सुरक्षा करने वाले पति के पुत्र-पौत्रादि स्वजन हैं, उनके समीप रहो ॥१८,३.२॥

अपश्यं युवतिं नीयमानां जीवां मृतेभ्यः परिणीयमानाम् ।
अन्धेन यत्तमसा प्रावृतासीत्प्राक्तो अपाचीमनयं तदेनाम् ॥१८,३.३॥

मृतपुरुष के पीछे-पीछे श्मशान भूमि में जाती हुई तरुणी स्त्री को पुन: घर की ओर वापस होती हुई हमने देखा है। यह स्त्री शोक से उत्पन्न घने अंधेरे से आवृत थी। उस स्त्री को यहाँ सामने लेकर आये हैं ॥१८,३.३॥

प्रजानत्यघ्ये जीवलोकं देवानां पन्थामनुसंचरन्ती ।
अयं ते गोपतिस्तं जुषस्व स्वर्गं लोकमधि रोहयैनम् ॥१८,३.४॥

हे अवध्य स्त्री ! तुम इस संसार को ठीक-ठीक जानकर देवत्व का मार्ग को अनुसरण करो। अपने उसे पति से प्रीति करो। उसके सत्कर्मों में सहायिका बनकर उसे स्वर्गलोक का अधिकारी बनाओ ॥१८,३.४॥

उप द्यामुप वेतसमवत्तरो नदीनाम् ।
अग्ने पित्तमपामसि ॥१८,३.५॥

नदियों का जल, काई (सिवार) और वेतस (नदी के किनारे उगने वाले नड़) में अत्यन्त संरक्षक सारभूत तत्त्वं है । हे अग्निदेव ! आप जल और पित्त का शोधन करने वाले हैं ॥१८,३.५॥

यं त्वमग्ने समदहस्तमु निर्वापय पुनः ।
क्याम्बूरत्र रोहतु शाण्डदूर्वा व्यल्कशा ॥१८,३.६॥

हे अग्निदेव ! जिस मृत पुरुष को आपने भस्म किया है, उसे भली प्रकार सुखी करें। इस दहन स्थल पर क्याम्बु (ओषधियुक्त जल) का सिञ्चन करें, ताकि विविध शाखाओं से युक्त दुःखनाशक दूर्वा (घास) उगे ॥१८,३.६॥

इदं त एकं पुर ऊ त एकं तृतीयेन ज्योतिषा सं विशस्व ।
संवेशने तन्वा चारुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थे ॥१८,३.७॥

हे प्रेतपुरुष ! तुम्हारे परलोक की ओर जाने के लिए यह (गार्हपत्य) अग्नि एक ज्योति के रूप में हैं । तुम (अन्वाहार्य

पचन नामक) द्वितीय ज्योति तथा (आवाहनीय नामक) तृतीय ज्योति में भली प्रकार स्वयं को प्रविष्टकरो। इस प्रकार अग्नि संस्कार से उत्पन्न देवत्व प्रधान शरीर से शोभायुक्त होकर वृद्धि को प्राप्त करो ॥१८,३.७॥

उत्तिष्ठ प्रेहि प्र द्रवौकः कृणुष्व सलिले सधस्थे ।
तत्र त्वं पितृभिः संविदानः सं सोमेन मदस्व सं स्वधाभिः ॥१८,३.८॥

हे प्रेत ! तुम इस स्थान से ऊपर उठो, उठने के बाद शीघ्रता से चलते हुए अन्तरिक्ष लोक में अपना आश्रय बनाओ। उस लोक में पितरजनों से मतैक्य (सामञ्जस्यों करके सोमपान से भली-प्रकार आनन्दित हो । श्राद्धकर्म के समय प्रदान किये गये स्वधान्न से तृप्त होकर आनन्द प्राप्त करो ॥१८,३.८॥

प्र च्यवस्व तन्वं सं भरस्व मा ते गात्रा वि हायि मो शरीरम् ।
मनो निविष्टमनुसंविशस्व यत्र भूमेर्जुषसे तत्र गछ ॥१८,३.९॥

हे प्रेतपुरुष ! तुम इस स्थान से आगे बढ़कर शरीर का भली प्रकार पोषण करो। तुम्हारे हाथ पैर आदि अंग तुम्हें छोड़कर न जाएँ, तुम्हारा शरीर भी तुम्हें पृथक् न करे, तुम्हारा मन जिसे अपना ध्येय मान रहा है, उस स्वर्गादि

लोक में प्रवेश करे । तुम जिस भू-भाग से स्नेह रखते हो, उस क्षेत्र को प्राप्त करो ॥१८,३.९॥

वर्चसा मां पितरः सोम्यासो अञ्जन्तु देवा मधुना घृतेन ।
चक्षुषे मा प्रतरं तारयन्तो जरसे मा जरदष्टिं वर्धन्तु ॥१८,३.१०॥

सोम सम्पादनशील पितृदेव हम याजकों को तेजस्विता से सम्पन्न करें । समस्त देवगण मधुरतायुक्त घृत से हमें सम्पन्न करें । हमें लम्बे समय तक दर्शन लाभ के लिए रोग इत्यादि से पृथक् करें । हमें वृद्धावस्था तक समर्थ सक्रिय बनाते हुए दीर्घायु प्रदान करें ॥१८,३.१०॥

वर्चसा मां समनक्त्वग्निर्मेधां मे विष्णुर्यनक्त्वासन् ।
रयिं मे विश्वे नि यछन्तु देवाः स्योना मापः पवनैः पुनन्तु ॥१८,३.११॥

अग्निदेव से हमें तेजस्विता की प्राप्ति हो । सर्वदेव, विष्णुदेव हमारे मस्तक में विवेक बुद्धि को भली प्रकार स्थापित करें । सम्पूर्ण देवशक्तियाँ कल्याणप्रद वैभव की हमें प्राप्ति कराएँ तथा जल अपने शुद्धतायुक्त वायु के अंशों से हमें पावन बनाएँ ॥१८,३.११॥

मित्रावरुणा परि मामधातामादित्या मा स्वरवो वर्धयन्तु ।
वर्चो म इन्द्रो न्यनक्तु हस्तयोर्जरदष्टिं मा सविता कृणोतु
॥१८,३.१२॥

दिन और रात्रि के अधिष्ठाता देव एवं मित्रावरुण देव हमें वस्त्रादि से युक्त करें । अदिति के पुत्र आदित्यगण हमारे वैरियों को संताप देते हुए हमें बढ़ाएँ। ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव हमारे हाथों में शौर्य स्थापित करें । सर्वप्रेरक सवितादेव हमें दीर्घ आयुष्य प्रदान करें ॥१८,३.१२॥

यो ममार प्रथमो मर्त्यानां यः प्रेयाय प्रथमो लोकमेतम् ।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा सपर्यत
॥१८,३.१३॥

मनुष्यों में सर्वप्रथम विवस्वान् के पुत्र राजा यम को मृत्यु की प्राप्ति हुई, पश्चात् वे लोकान्तर को प्राप्त हुए । उसी सूर्य-पुत्र यम को सभी प्राणी प्राप्त करते हैं । हे ऋत्विजो ! सभी प्राणियों के पुण्य-पाप के अनुसार फल-प्रदाता राजा यम की आप सब अर्चना करें ॥१८,३.१३॥

परा यात पितर आ च यातायं वो यज्ञो मधुना समक्तः ।
दत्तो अस्मभ्यं द्रविणेह भद्रं रयिं च नः सर्ववीरं दधात
॥१८,३.१४॥

हे पितरो ! हमारे द्वारा किये गये पितृयज्ञ रूपी कर्म से परितृप्त होकर आप अपने स्थान को वापस जाएँ, पुनः आवाहन करने पर आगमन की कृपा करें । हमने आपके लिए मधुर घृत से युक्त आहुतियाँ प्रदान की हैं, उन्हें ग्रहण करके आप हमारे लिए इस गृह में कल्याणकारी धन प्रतिष्ठित करें । पुत्र-पौत्रादि प्रजा तथा पशुधन से हमें सम्पन्न बनाएँ ॥१८,३.१४॥

कण्वः कक्षीवान् पुरुमीढो अगस्त्यः श्यावाश्वः सोभर्यर्चनानाः ।
विश्वामित्रोऽयं जमदग्निरत्रिरवन्तु नः कश्यपो वामदेवः ॥१८,३.१५॥

कण्व, कक्षीवान्, पुरुमीढ, अगस्त्य, श्यावाश्व, सोभरि, विश्वामित्र, जमदग्नि, अत्रि, कश्यप और वामदेव आदि सभी पूजनीय ऋषि हमारी रक्षा करें ॥१८,३.१५॥

विश्वामित्र जमदग्ने वसिष्ठ भरद्वाज गोतम वामदेव ।
शर्दिर्नो अत्रिरग्रभीन् नमोभिः सुसंशासः पितरो मृडता नः ॥१८,३.१६॥

विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, वामदेव आदि हे अषियो ! आप सभी हमें सुख प्रदान करें । अत्रि ऋष ने हमारे गृह को संरक्षण हेतु स्वीकार किया है । हे स्वधान्न से स्तुति योग्य पितृगण ! आप सभी हमारे लिए सुखकारी हों ॥१८,३.१६॥

कस्ये मृजाना अति यन्ति रिप्रमायुर्दधानाः प्रतरं नवीयः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेनाध स्याम सुरभयो गृहेषु ॥१८,३.१७॥

हम श्मशान स्थल में बन्धु की मृत्यु के शोक का परित्याग करते हुए शवस्पर्श से उत्पन्न पाप से विमुख होकर घर जाते हैं। इससे हम दुखों से रहित हों । पुत्र-पौत्रादि प्रजा, स्वर्ण, रजत, गौ, अश्वादि पशुधन से बढ़े तथा घरों में श्रेष्ठ (कर्मों की) सुगन्ध भरी रहे ॥१८,३.१७॥

अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मधुनाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमासु गृह्णते ॥१८,३.१८॥

(पित्तरों की तुष्टि-वृद्धि के लिए किये जाने वाले सोमनामक) यज्ञ में मधुर रस (आज्य अथवा सोमरस) का ही प्रयोग करते हैं। इस आज्य (रस) से यज्ञ को संयुक्त करते हैं, इसी

से यज्ञ में आहुतियाँ देते हैं तथा इसी से यज्ञ का विस्तार करते हैं। इसी सोमरस (चन्द्रमा की रश्मियों) के संसर्ग से सुवर्ण आदि धन की रक्षा करने वाले सागर के जल में वृद्धि होती है। वहीं सोम (चन्द्रमा) सभी को अपनी धाराओं (शीतल रश्मियों) सेअभिषिञ्चित करते हैं ॥१८,३.१८॥

यद्वो मुद्रं पितरः सोम्यं च तेनो सचध्वं स्वयशसो हि भूत ।
ते अर्वाणः कवय आ शृणोत सुविदत्रा विदथे हुयमानाः
॥१८,३.१९॥

हे पितरगण ! हर्ष एवं सौम्यता को बढ़ाने वाले आपके जो कार्य हैं, उनसे आप हमें संयुक्त करें । आप निश्चित रूप से यशस्वी हैं, अत: अभीष्ट फल प्रदान करें । गतिशील, क्रान्तदर्शी तथा श्रेष्ठ धन-सम्पन्न आप यज्ञ में बुलाये जाने पर पधार कर हमारी उपर्युक्त प्रार्थनाएँ सुनें ॥१८,३.१९॥

ये अत्रयो अङ्गिरसो नवग्वा इष्टावन्तो रातिषाचो दधानाः ।
दक्षिणावन्तः सुकृतो य उ स्थासद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम्
॥१८,३.२०॥

हे पितरगण ! आप अत्रि और अंगिरा ऋषियों के गोत्र में उत्पन्न हुए हैं, नौ महीनों तक सत्रयज्ञ (नवग्व) करके स्वर्ग के अधिकारी बन चुके हैं तथा दर्श पूर्णमास आदि यज्ञ

सम्पन्न कर चुके हैं। इसलिए आप बिछाये गये कुशा के आसनों पर विराजमान होकर हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों से परितृप्त हों ॥१८,३.२०॥

अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासो अग्न ऋतमाशशानाः ।
शुचीदयन् दीध्यत उक्थशसः क्षामा भिन्दन्तो अरुणीरप व्रन्
॥१८,३.२१॥

हमारे पूर्वजों ने श्रेष्ठ, प्राचीन और ऋतरूप यज्ञ कर्मों में नियत स्थान तथा ओज को प्राप्त किया। उन लोगों ने स्तोत्रों को उच्चारित करके तम को नष्ट किया तथा अरुण रंगवाली उषा को प्रकाशित किया ॥१८,३.२१॥

सुकर्मानः सुरुचो देवयन्तो अयो न देवा जनिमा धमन्तः ।
शुचन्तो अग्निं वावृधन्त इन्द्रमुर्वीं गव्यां परिषदं नो अक्रन्
॥१८,३.२२॥

जिस प्रकार लोहार धौंकनी द्वारा लोहे को पवित्र बनाता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म में निरत तथा अभिलाषा करने वाले याजक यज्ञादि कर्म से मनुष्य जीवन को पवित्र बनाते हैं । वे अग्निदेव को प्रदीप्त करके इन्द्रदेव को समृद्ध करते हैं। चारों तरफ से घेर करके उन्होंने महान् गौओं (पोषक प्रवाहों) के झुण्ड को प्राप्त किया था ॥१८,३.२२॥

आ यूथेव क्षुमति पश्वो अख्यद्देवानां जनिमान्त्युग्रः ।
मर्तासश्चिदुर्वशीरकृप्रन् वृधे चिदर्य उपरस्यायोः ॥१८,३.२३॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! जैसे अन्न से सम्पन्न घर में पशुओं के झुण्ड की सराहना की जाती है, उसी प्रकार जो लोग देवताओं के निकट उनकी प्रार्थना करते हैं, उनकी संतानें समर्थ होती हैं और उनके स्वामी पालन करने में सक्षम होते हैं ॥२३॥

अकर्म ते स्वपसो अभूम ऋतमवस्रन् उषसो विभातीः ।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥१८,३.२४॥

हे पालनकर्ता अग्निदेव ! हम आपके सेवक हैं, आपकी तेजस्विता से हम श्रेष्ठ कर्मों से युक्त हों, प्रभातवेला हमारे यज्ञ, दानादि कर्मफल को सत्य सिद्ध करे । देवशक्तियाँ जिस शास्त्रोक्त कर्म की सुरक्षा करती हैं, वे सभी हमारे लिए कल्याणकारक हों । हम श्रेष्ठ संतति से युक्त यज्ञ में बृहत् स्तुतियाँ बोलें ॥१८,३.२४॥

इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।

लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.२५॥

मरुद्गणों के साथ इन्द्रदेव हम संस्कारकर्ता मनुष्यों को पूर्वदिशा में संव्याप्त भय से सुरक्षित करें । पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार आप हमारा संरक्षण करें। जिन देवों के निमित्त यज्ञभाग आहुति स्वरूप दिया गया है, जो देवमार्ग का निर्माण करने वाले तथा देवलोक तक ले जाने वाले हैं, उनकी हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.२५॥

धाता मा निर्ऋत्या दक्षिणाया दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.२६॥

सबके धारणकर्ता धातादेव दक्षिण दिशा से आने वाली आपदाओं से हमारी सुरक्षा करें । पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार आप हमारा संरक्षण करें। जिन देवों के निमित्त यज्ञ भाग आहुति स्वरूप दिया गया है, जो देवमार्ग का निर्माण करने वाले तथा देवलोक तक पहुँचाने वाले हैं, उनकी हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.२६॥

अदितिर्मादित्यैः प्रतीच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.२७॥

अपने पुत्रों के साथ देवमाता अदिति हमें पश्चिम दिशा की आसुरी वृत्तियों से संरक्षित करें । पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार आप हमारा संरक्षण करें। जिन देवों के लिए यज्ञीय भाग दिया जा चुका है, जो देव मार्ग प्रवर्तक और स्वर्गलोक तक ले जाने वाले हैं, उनकी हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.२७॥

सोमो मा विश्वैर्देवैरुदीच्या दिशः पातु बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.२८॥

समस्त देवों के साथ सोमदेव उत्तर दिशा में स्थित श्मशान में रहने वाले असुरों के भय से हमें संरक्षित करें । पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार आप हमारा संरक्षण करें। जिन देवों के लिए यह यज्ञीय भाग आहुत हो चुका है, उन स्वर्ग के मार्गदर्शक और

स्वर्ग तक ले जाने वाले देवों की हम वन्दना करते हैं ॥१८,३.२८॥

धर्ता ह त्वा धरुणो धारयाता ऊर्ध्वं भानुं सविता द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.२९॥

हे प्रेतपुरुष ! सम्पूर्ण विश्व के धारणकर्ता धरुणदेव ऊर्ध्वदिशा में जाने के लिए तुझे धारण करें, जिस प्रकार सर्वप्रेरक सूर्यदेव दीप्तिमान् द्युलोक को ऊपर हीं धारण किये रहते हैं। पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक का संरक्षण करती है, उसी प्रकार आप हमारा भी संरक्षण करें । जिन देवों के लिए यज्ञीय अंश दिया जा चुका है, उन स्वर्ग के मार्गदर्शक देवों का हम वन्दन करते हैं ॥१८,३.२९॥

प्राच्यां त्वा दिशि पुरा सम्वृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ १८,३.॥३०॥

दहन स्थल से पूर्व दिशा की ओर कम्बल आदि द्वारा आच्छादित हुए हे प्रेतपुरुष ! हम तुम्हें पितरों को परितृप्त

करने वाली स्वधा में स्थापित करते हैं । पृथिवी जैसे द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, वैसे भूमि तुम्हारी सुरक्षा करे । हे देवगण ! जिनके निमित्त यज्ञीय भाग दिया जा चुका है, उनकी हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३०॥

दक्षिणायां त्वा दिशि पुरा सम्वृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥३१॥

हे प्रेतपुरुष ! दहन स्थल से दक्षिण दिशा की ओर कम्बल से आच्छादित तुम्हें, हम पितरों की तृप्तिप्रद स्वधा समर्पित करते हैं। पृथ्वी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार वह तुम्हारा भी संरक्षण करे । हे देवगण !जिनके निमित्त यज्ञीय भाग निष्पन्न किया जा चुका है, उनकी हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३१॥

प्रतीच्यां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.३२॥

दहन स्थल से पश्चिम की ओर वस्त्रादि से आच्छादित हुए हे प्रेतपुरुष ! हम तुम्हें पितरों के लिए तृप्तिदायक स्वधा में प्रतिष्ठित करते हैं। पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार वह तुम्हारा भी संरक्षण करे । हे देवगण ! जिनके निमित्त यज्ञीय भाग आहुत हो चुका है, ऐसे स्वर्ग के मार्गदर्शक देवों की हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३२॥

उदीच्यां त्वा दिशि पुरा सम्वृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.३३॥

दहनस्थल से उत्तराभिमुख वस्त्रादि से आच्छादित हुए हे प्रेतपुरुष ! हम तुम्हें पितरजनों के लिए तृप्तिप्रद स्वधा में प्रतिष्ठित करते हैं । पृथिवी जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार वह तुम्हारा भी संरक्षण करे। हे देवगण ! जिनके निमित्त हव्यभाग आहुत किया जा चुका है, ऐसे स्वर्ग के मार्गदर्शक देवों की हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३३॥

ध्रुवायां त्वा दिशि पुरा संवृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।

लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.३४॥

दहन दिशा से ध्रुव दिशा की ओर वस्त्रादि से ढके हुए है प्रेतपुरुष ! पितरों को परितृप्त करने वाली स्वधा में हम तुम्हें प्रतिष्ठित करते हैं । पृथिवीं जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार वह तुम्हारा भी संरक्षण करे । जिनके निमित्त हव्यभाग दिया जा चुका है, ऐसे स्वर्ग के मार्गदर्शक देवगणों की हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३४॥

ऊर्ध्वायां त्वा दिशि पुरा सम्वृतः स्वधायामा दधामि बाहुच्युता पृथिवी द्यामिवोपरि ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,३.३५॥

दहन स्थल से ऊपरी (ऊर्ध्व) दिशा की ओर वस्त्रादि से ढके हुए हे प्रेतपुरुष ! पितरों को परितृप्त करने वाली स्वधाहृति में हम तुम्हें प्रतिष्ठित करते हैं। पृथिवीं जिस प्रकार द्युलोक को संरक्षण प्रदान करती है, उसी प्रकार वह तुम्हारा भी संरक्षण करे, जिनके निमित्त हव्यभाग आहुत हो चुका है, ऐसे मार्गप्रेरक स्वर्ग प्राप्तिरूप देवों की हम अर्चना करते हैं ॥१८,३.३५॥

धर्तासि धरुनोऽसि वंसगोऽसि ॥१८,३.३६॥

हे अग्निदेव ! आप सबके धारणकर्ता और सबके द्वारा धारण किये जाने वाले हैं। आप संभजनीय पदार्थों के प्राप्तिरूप हैं ॥१८,३.३६॥

उदपूरसि मधुपूरसि वातपूरसि ॥१८,३.३७॥

हे अग्निदेव ! आप सम्पूर्ण विश्व में जल पहुँचाने वाले, मधुर गुणों से युक्त रसों को पहुँचाने वाले तथा प्राण वायु को प्रवाहित करने वाले हैं ॥१८,३.३७॥

इतश्च मामुतश्चावतां यमे इव यतमाने यदैतम् ।
प्र वां भरन् मानुषा देवयन्तो आ सीदतां स्वमु लोकं विदाने ॥१८,३.३८॥

हे हविर्धाना (हविष्य को धारण करने वाली) द्यावापृथिवी ! इस पृथ्वी और स्वर्ग में विद्यमान सभी विपदाओं से हमारा संरक्षण करें । हे हविर्धाना ! आप दोनों जुड़वाँ उत्पन्न हुई सन्तति के समान विश्व को पोषण करने के लिए साथ-साथ प्रयलशील होकर विचरण करती हैं। देवशक्तियों के अनुग्रह के इच्छुक साधक जब आपके निमित्त हवि

समर्पित करें, तब आप अपने उपयुक्त स्थान को जानकर आसन ग्रहण करें ॥१८,३.३८॥

स्वासस्थे भवतमिन्दवे नो युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिः ।
वि श्लोक एति पथ्येव सूरिः शृण्वन्तु विश्वे अमृतास एतत्॥१८,३.३९॥

है हविर्धाना ! हमारी वैभव-सम्पन्नता हेतु आप दोनों श्रेष्ठ आसन पर विराजमान हों। जिस प्रकार विद्वान् सन्मार्ग पर चलकर अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार हम आपको पुरातन स्तोत्रों सहित नमन करते हैं, ताकि ये स्तुतियाँ आप तक पहुँचती रहें । हमारी इन स्तुतियों को सभी अमरत्व प्राप्त देवगण सुनें ॥१८,३.३९॥

त्रीणि पदानि रुपो अन्वरोहच्चतुष्पदीमन्वेतद्व्रतेन ।
अक्षरेण प्रति मिमीते अर्कमृतस्य नाभावभि सं पुनाति ॥१८,३.४०॥

मोहमाया से ग्रस्त मृतात्मा इस संस्कार से अनुस्तरणी गौ को ध्यान में रखकर तीनों लोकों पर आरोहण करती है ।वह इस नाशवान् देह को त्यागकर अविनाशी आत्मस्वरूप से स्वर्गादि पुण्य फल को प्राप्त करती है॥१८,३.४०॥

देवेभ्यः कमवृणीत मृत्युं प्रजायै किममृतं नावृणीत ।
बृहस्पतिर्यज्ञमतनुत ऋषिः प्रियां यमस्तन्वमा रिरेच
॥१८,३.४१॥

मृत्यु देवों का वरण क्यों नहीं करती ? देवों के अमरत्व के निमित्त बृहस्पतिदेव ने ऋषिव पद को प्राप्त करके यज्ञ सम्पन्न किया, उसके फलस्वरूप देवों को अमरत्व पद की प्राप्ति हुई । मनुष्यादि प्रजाजनों के लिए विधाता ने अमरत्व का विधान नहीं बनाया, इसलिए वे 'मयं' कहलाये । इसी कारण प्राणों के अपहरणकर्ता यमराज मनुष्यों की देह से प्राण को पृथक् करते हैं ॥१८,३.४१॥

त्वमग्न ईडितो जातवेदोऽवाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वा ।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्न् अद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि
॥१८,३.४२॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! हम आपके प्रति स्तुति-प्रार्थना करते हैं । आप हमारी श्रेष्ठ सुगन्धित आहुतियों को स्वीकार करके पितरगणों को प्रदान करें। पितरगण स्वधा द्वारा समर्पित आहुतियों को ग्रहण करें। हे अग्निदेव !आप भी श्रद्धा-भावनापूर्वक समर्पित आहुतियों का सेवन करें ॥१८,३.४२॥

आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय ।
पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्जं दधात
॥१८,३.४३॥

अरुणिम ज्वालाओं के सन्निकट बैठने वाले (यज्ञादि कर्म सम्पन्न करने वाले) यजमान को धन-धान्य प्रदान करें । है पितरो ! आप यजमान के पु-पौत्रों को भी धन ऐश्वर्य प्रदान करें, जिससे वे यज्ञादि कर्मों के निमित्त धन नियोजित करते रहें ॥१८,३.४३॥

अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः ।
अत्तो हवींषि प्रयतानि बर्हिषि रयिं च नः सर्ववीरं दधात
॥१८,३.४४॥

हे अग्निष्वाता पितरो ! आप यहाँ आएँ और निर्धारित स्थानों में विराजमान हों । हे पूजनीय पितरो ! पात्रों में स्थित हविष्यान्न का सेवन करें तथा सन्तानादि से युक्त ऐश्वर्य एवं साधन हमें प्रदान करें ॥१८,३.४४॥

उपहूता नः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
त आ गमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्
॥१८,३.४५॥

अपने पितृगणों का आवाहन करते हैं । कुश- आसन पर विराजमान होकर प्रस्तुत सोमरस आदि हविष्यान्न का उपभोग करें । हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके प्रसन्न होते हुए हमारी रक्षा करें ॥१८,३.४५॥

ये नः पितुः पितरो ये पितामहा अनूजहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः ।
तेभिर्यमः सम्ररणो हवींष्युशन्न् उशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥१८,३.४६॥

सोमरस तैयार करने वाले वसिष्ठ आदि (याजको वैभव-सम्पन्न होकर सोमपायी पितरों को हविरूप सोम प्रदान करते हैं। पितरों के साथ पितृपति यम के हविष्य की कामना करते हैं, वे सभी उनका सेवन करें ॥१८,३.४६॥

ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविदः स्तोमतष्टासो अर्कैः ।
आग्ने याहि सहस्रं देववन्दैः सत्यैः कविभिर्ऋषिभिर्घर्मसद्भिः ॥१८,३.४७॥

देवत्व को प्राप्त हुए, यज्ञों के विशेषज्ञ, स्तोत्रों के रचयिता, जो पितरजन पूजनीय स्तुतियों द्वारा इस संसार रूप सागर से पार हो गये हैं, उन हजारों बार देवों द्वारा स्तुत, वचनपालक, क्रान्तदर्शी अषयों एवं यज्ञ में विराजमान होने

वाले पितरों के साथ हे अग्निदेव ! आप हमारे पास पधारें ॥१८,३.४७॥

ये सत्यासो हविरदो हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं तुरेण ।
आग्ने याहि सुविदत्रेभिरर्वाङ्परैः पूर्वैर्ऋषिभिर्घर्मसद्भिः ॥१८,३.४८॥

जो पितरगण वचनपालक, हवि की रक्षा करके उसे ग्रहण करने वाले तथा वेगसम्पन्न इन्द्रादि देवों के साथ रथारूढ़ होते हैं। उन कल्याणमयीं विद्या वाले ऐसे प्राचीन व नवीन ऋषियों के साथ यज्ञ में बैठने वाले पितरगणों सहित हे अग्निदेव ! आप हमारे निमित्त पधारें ॥१८,३.४८॥

उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम् ।
ऊर्णम्रदाः पृथिवी दक्षिणावत एषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात्॥१८,३.४९॥

हे मृतक ! आप इस मातृ- स्वरूपा, महिमामयी, सर्वव्यापिनी तथा सुखदायिनी धरतीमाता की गोद में विराजमान हों। यह धरतीमाता ऊन के समान कोमल स्पर्श वाली तथा दानी पुरुष की स्त्री के समान ही सभी ऐश्वर्यों की स्वामिनी है । यह (पृथ्वी माता) तुम्हारे प्रशस्त पथ की रक्षा करे ॥१८,३.४९॥

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि मा नि बाधथाः सूपायनास्मै भव सूपसर्पणा ।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥१८,३.५०॥

हे धरतीमातः ! मृतक को पीड़ादायक सन्ताप से रक्षित करने के लिए आप इसे ऊपर उठाएँ। इसका भली प्रकार स्वागत-सत्कार करने वाली तथा सुख में साथ रहने वाली बनें । हे भूमातः ! जिस प्रकार माता पुत्र को अञ्चल से ढंकती है, उसी प्रकार आप भी इसे सभी ओर से आच्छादित करें ॥१८,३.५०॥

उच्छ्वञ्चमाना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम् ।
ते गृहासो घृतश्चुतः स्योना विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वत्र ॥१८,३.५१॥

हे मृतक ! देह को आच्छादित करने वाली धरती माता भली प्रकार स्थित हों तथा हजारों प्रकार के धूलिकण इसके ऊपर समर्पित करें। यह धरती घृत की स्निग्धता के समान आश्रय प्रदान करने वाली होकर सुखदायी हो॥१८,३.५१॥

उत्ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत्परीमं लोगं निदधन् मो अहं रिषम् ।
एतां स्थूणां पितरो धारयन्ति ते तत्र यमः सादना ते कृणोतु ॥१८,३.५२॥

हे अस्थि कुम्भ ! आपके ऊपर पृथ्वी (मिट्टी) को भली प्रकार स्थापित करते हैं, आप इस भार को वहन करें । यह आपको पीड़ा न पहुँचाए। आपके इस अवलम्बन को पितरगण धारण करें। यमदेव यहाँ आपके निमित्त निवास स्थल प्रदान करें ॥१८,३.५२॥

इममग्ने चमसं मा वि जिह्वरः प्रियो देवानामुत सोम्यानाम् ।
अयं यश्चमसो देवपानस्तस्मिन् देवा अमृता मादयन्ताम् ॥१८,३.५३॥

हे अग्ने ! देवों और पितरगणों के प्रिय इस चमस पात्र को आप हिंसित न करें। यह चमसपात्र मात्र देवताओं के सोमपान के निमित्त ही सुरक्षित है। इसी से सम्पूर्ण अविनाशी देव तथा पितरगण आनन्दित होते हैं ॥१८,३.५३॥

अथर्वा पूर्णं चमसं यमिन्द्रायाबिभर्वाजिनीवते ।

तस्मिन् कृणोति सुकृतस्य भक्षं तस्मिन् इन्दुः पवते विश्वदानिम् ॥१८,३.५४॥

अथर्वा (अविचल बुद्धिवाले) ऋषि ने हवि से परिपूर्ण जिस अन्नयुक्त चमस पात्र को इन्द्रदेव के निमित्त धारण किया था, उस चमस में ऋत्विग्गण भली प्रकार सम्पन्न किये गये यज्ञ में यज्ञावशिष्ट हवि का सेवन करते हैं। उसी अथर्वा द्वारा विनिर्मित चमस में रसरूप अमृत सदैव बहता रहता है ॥१८,३.५४॥

यत्ते कृष्णः शकुन आतुतोद पिपीलः सर्प उत वा श्वापदः ।
अग्निष्टद्विश्वादगदं कृणोतु सोमश्च यो ब्राह्मणामाविवेश ॥१८,३.५५॥

हे मृत मनुष्य ! आपके शरीर (जिस अंग-अवयव) को कौए, चींटी, साँप अथवा किसी दूसरे हिंसक पशु ने व्यथित किया हो, तो सर्वभक्षक अग्निदेव उस अंग को पीड़ारहित करें । शरीर के अन्दर जो पोषण- रसरूप सोम विद्यमान है, वह भी उसे कष्टमुक्त करे ॥१८,३.५५॥

पयस्वतीरोषधयः पयस्वन् मामकं पयः ।
अपां पयसो यत्पयस्तेन मा सह शुम्भतु ॥१८,३.५६॥

हमारे लिए ओषधियाँ सारयुक्त हों । हमारा सार ही सार सम्पन्न हो, जल इत्यादि रसों के साररूप सत्त्व अंश से जलाभिमानी वरुणदेव हमें शुद्ध करें ॥१८,३.५६॥

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं स्पृशन्ताम् ।
अनश्रवो अनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे ॥१८,३.५७॥

सधवा(सौभाग्यवती) और सुन्दर नारियाँ घृताञ्जन से शोभायमान होकर अपने घरों में प्रविष्ट हों । ये नारियाँ आँसुओं को रोककर मानसिक विकारों का त्याग करती हुई, आभूषणों से सुसज्जित होकर आदरपूर्वक आगे आगे चलती हुई घरों में प्रविष्ट हों ॥१८,३.५७॥

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।
हित्वावद्यं पुनरस्तमेहि सं गछतां तन्वा सुवर्चाः ॥१८,३.५८॥

हे पिता ! आप उत्तम लोक स्वर्ग में यज्ञ आदि दान- पुण्य कर्मों के फलस्वरूप अपने पितरगणों के साथ संयुक्त हों । पाप कर्मों के प्रभाव से मुक्त होकर पुन: घर में प्रविष्ट हों तथा तेजस्वी देवरूप को प्राप्त करें ॥१८,३.५८॥

ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुरुर्वन्तरिक्षम् ।

तेभ्यः स्वरादसुनीतिर्नो अद्य वथावशं तन्वः कल्पयाति ॥१८,३.५९॥

पितामह, प्रपितामह तथा हमारे गोत्र में उत्पन्न हुए जिन पितरों ने विस्तृत अन्तरिक्षलोक में प्रवेश लिया है, उनके निमित्त स्वयं प्रकाशमान प्राणस्वरूप परमेश्वर हमारी देहों को इच्छानुरूप विनिर्मित करते हैं ॥१८,३.५९॥

शं ते नीहारो भवतु शं ते प्रुष्वाव शीयताम् ।
शीतिके शीतिकावति ह्लादिके ह्लादिकावति ।
मण्डूक्यप्सु शं भुव इमं स्वग्निं शमय ॥१८,३.६०॥

हे प्रेतपुरुष ! दहन से उत्पन्न तुम्हारी जलन को यह कुहरा शान्त करे। धीरे- धीरे बरसते हुए बादल तुम्हें सुख प्रदान करें । हे शीतिका ओषधि सम्पन्न और ह्लादिका ओषधियुक्त माता पृथि ! आप इस दग्ध हुए प्रेतात्मा के लिए मण्डूकपर्णी ओषधि से सुख प्रदान करें, आप इस दाहक अग्नि को अच्छी तरह शान्त कर दें ॥१८,३.६०॥

विवस्वान् नो अभयं कृणोतु यः सुत्रामा जीरदानुः सुदानुः ।
इहेमे वीरा बहवो भवन्तु गोमदश्ववन् मय्यस्तु पुष्टम् ॥१८,३.६१॥

सब प्रकार से संरक्षक, जीवनदाता सूर्यदेव हमें अभय प्रदान करें। इस संसार में हमारी पुत्र-पौत्रादि सन्तति की वृद्धि हो, हम गाय, अश्वादि पशुओं से परिपूर्ण रहें ॥१८,३.६१॥

विवस्वान् नो अमृतत्वे दधातु परैतु मृत्युरमृतं न ऐतु ।
इमान् रक्षतु पुरुषान् आ जरिम्णो मो स्वेषामसवो यमं गुः ॥१८,३.६२॥

सूर्यदेव हमें अमरत्व प्रदान करें। उनकी कृपादृष्टि से मृत्यु का भय समाप्त हो । हम अमरत्व पद के अधिकारी बनें तथा वे वृद्धावस्था तक इन पुत्र-पौत्रादि की सुरक्षा करें । इनमें से किसी के प्राण वैवस्वत यम को प्राप्त न हों ॥१८,३.६२॥

यो दध्रे अन्तरिक्षे न मह्ना पितॄणां कविः प्रमतिर्मतीनाम् ।
तमर्चत विश्वमित्रा हविर्भिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धात्॥१८,३.६३॥

वे प्रखर प्रतिभा सम्पन्न और क्रान्तदर्शी यमदेव मेधा सम्पन्न पितरों को अपनी सामर्थ्य से अन्तरिक्षलोक में धारण किये हुए हैं । हे सम्पूर्ण विश्व के मित्ररूप मानवो ! आप यमराज

की आहुतियों से अर्चना करें । वे पूजनीय यम हमारे जीवन को दीर्घायु प्रदान करें ॥१८,३.६३॥

आ रोहत दिवमुत्तमामृषयो मा बिभीतन ।
सोमपाः सोमपायिन इदं वः क्रियते हविरगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१८,३.६४॥

हे मंत्रद्रष्टा ऋषिगण ! आप यज्ञीय सत्कर्मों के प्रभाव से श्रेष्ठ स्वर्गलोक में आरूढ़ हों, किसी प्रकार से भयभीत न हों । हे अषियो ! आप सोमपानकर्ता और अन्यों को सोमपान में सहयोग करने वाले हैं, आपके निमित्त हम हविष्यान्न समर्पित करते हैं, जिससे हम उत्तम ज्योति (अर्थात् चिरजीवन) प्राप्त करें ॥१८,३.६४॥

प्र केतुना बृहता भात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति ।
दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥१८,३.६५॥

वे अग्निदेव धूम्ररूष'विशाल पताका से युक्त होकर , द्युलोक और पृथ्वी में संव्याप्त होते हैं। वे देवों के आवाहन काल में वर्षणशील एवं शब्द करने वाले होते हैं। वे द्युलोक के समीपस्थ प्रदेश में व्याप्त होते हैं तथा जल के

आश्रय- स्थान अन्तरिक्ष में विद्युत्रूप में संवर्द्धित होते हैं ॥१८,३.६५॥

नाके सुपर्णमुप यत्पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरन्युम् ॥१८,३.६६॥

पक्षी की तरह आकाश में गतिशील सुनहले पंख वाले, सबको पोषण देने वाले वरुण (वरणीय) के दूत हे वेनदेव ! आपको लोग हृदय से चाहते हैं। अग्नि के उत्पत्ति स्थल अन्तरिक्ष में आपको पक्षी की तरह विचरण करते हुए (द्रष्टागण) देखते हैं ॥१८,३.६६॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥१८,३.६७॥

हे इन्द्रदेव ! हमें उत्तम कर्मों (यज्ञों) का फल प्राप्त हो । जैसे पिता पुत्रों को धन आदि प्रदान करके उनका पोषण करता है, वैसे ही आप हमें पोषित करें । अनेकों द्वारा सहायता के लिए पुकारे गये हे इन्द्रदेव ! यज्ञ में आप हमें दिव्य तेजस् प्रदान करें ॥१८,३.६७॥

अपूपापिहितान् कुम्भान् यांस्ते देवा अधारयन् ।
ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्चुतः ॥१८,३.६८॥

हे प्रेतपुरुष ! जिन घृत, मधु आदि से निर्मित मालपुओं से परिपूर्ण घड़ों को आपके उपभोग के लिए देवों ने धारण किया है, वे घड़े आपके लिए स्वधायुक्त, मधुरतायुक्त तथा घृत से परिपूर्ण हों ॥१८,३.६८॥

यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्रा स्वधावतीः ।
तास्ते सन्तु विभ्वीः प्रभ्वीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम् ॥६९॥

हे प्रेतपुरुष ! तिल मिश्रित स्वधायुक्त जो जौ की खीलें हम समर्पित कर रहे हैं, वे आपको ऐश्वर्य गुणसम्पन्न और तृप्तिदायी हों । राजा यम आपको खीलों का उपयोग करने की अनुमति प्रदान करें ॥१८,३.६९॥

पुनर्देहि वनस्पते य एष निहितस्त्वयि ।
यथा यमस्य सादन आसातौ विदथा वदन् ॥१८,३.७०॥

हे वनस्पतिदेव ! आपमें जिस अस्थिरूप पुरुष की स्थापना की गई थी, आप उसे हमें पुन: लौटाएँ, जिससे यमराज के

घर में वह यज्ञीय कर्मों को प्रकाशमान करता हुआ विराजमान हो ॥१८,३.७०॥

आ रभस्व जातवेदस्तेजस्वद्धरो अस्तु ते ।
शरीरमस्य सं दहाथैनं देहि सुकृतामु लोके ॥१८,३.७१॥

हे सर्वज्ञ अग्निदेव ! आप दहन कार्य के लिए तत्पर हों, आपका रस हरणशील तथा दहन ऊर्जा (लपटों) से युक्त हो। इस मृतदेह को आप अच्छी प्रकार से भस्मीभूत करें और पुण्यात्माओं के श्रेष्ठलोक स्वर्गमें प्रतिष्ठित करें ॥१८,३.७१॥

ये ते पूर्वे परागता अपरे पितरश्च ये ।
तेभ्यो घृतस्य कुल्यैतु शतधारा व्युन्दती ॥१८,३.७२॥

पहले उत्पन्न होकर जो पितरजन परलोक सिधारे हैं और जो बाद में उत्पन्न हुए अर्वाचीन पितर परलोक वासी हुए हैं, उन सभी प्राचीन व अर्वाचीन पितरों के लिए घृत की नदी प्रवाहित हो । उसकी असंख्य धाराएँआपको अभिषिञ्चित करती रहें ॥१८,३.७२॥

एतदा रोह वय उन्मृजानः स्वा इह बृहदु दीदयन्ते ।

अभि प्रेहि मध्यतो माप हास्थाः पितॄनां लोकं प्रथमो यो अत्र ॥१८,३.७३॥

हे मृतात्मन् ! आप इस देह से निकलकर स्वयं को शुद्ध करके इस अन्तरिक्ष में आरोहण करें। इस लोक में आपके बन्धुगण वैभव- सम्पन्न होकर रहें । बान्धवों की आसक्ति को त्यागकर उच्चलोक को लक्षित करके आरोहण करें । द्युलोक में जो पितरों का प्रमुख लोक है, उसका परित्याग न करें ॥१८,३.७३॥

॥अथर्ववेद – अष्टादशं काण्डम्॥

सूक्त ४- पितृमेध सूक्त

अग्नि की स्तुति अग्नि, वायु और सूर्य का स्वर्ग में निवास, प्रेत का संस्कार, वैश्वानर अग्नि द्वारा पितरों का पोषण, दाह संस्कार करने वाले पुरुषों द्वारा सरस्वती का आह्वान, सोमरस प्राप्त करने वाले अधिकारी पितर, अग्नि, पितरों और यम के लिए नमस्कार तथा प्रकाशमान अग्नि की स्तुति

आ रोहत जनित्रीं जातवेदसः पितृयानैः सं व आ रोहयामि ।
अवाङ्व्येषितो हव्यवाह ईजानं युक्ताः सुकृतां धत्त लोके
॥१८,४.१॥

हे (जन्म से ही ज्ञानी) अग्नियो ! आप अपनी जन्मदात्री (वनस्पतियों, अन्तरिक्षीय धाराओं) तक पहुँचें । हम आपको पितृयान मार्ग द्वारा वहाँ भली प्रकार पहुँचाते हैं। प्रिय हव्यों के वहनकर्ता अग्निदेव हविष्यान्न को वहन करते हैं । हे अग्नियो ! आप परस्पर मिलकर यज्ञीय सत्कर्मों के निष्पन्नकर्ता यजमान को श्रेष्ठ पुण्यात्माओं के लोक में प्रतिष्ठित करें ॥१८,४.१॥

देवा यज्ञमृतवः कल्पयन्ति हविः पुरोडाशं स्रुचो यज्ञायुधानि ।
तेभिर्याहि पथिभिर्देवयानैर्यैरीजानाः स्वर्गं यन्ति लोकम् ॥१८,४.२॥

इन्द्रादि देवगण ऋतुओं के अनुसार यज्ञ की क्रिया करते हैं। हव्य सामग्री, घृत , पुरोडाश, सुवा आदि यज्ञ पात्र, जुहू आदि यज्ञीय आयुध भी यज्ञ को सम्पादित करते हैं। हे पुरुष ! आप देवयान मार्ग का अनुगमन करें। यज्ञ के निष्पन्नकर्ता मनुष्य जिन मार्गों से प्रस्थान करते हैं, उन्हीं देवत्व की प्राप्ति कराने वाले मार्गों से आप आगे बढ़े ॥१८,४.२॥

ऋतस्य पन्थामनु पश्य साध्वङ्गिरसः सुकृतो येन यन्ति ।
तेभिर्याहि पथिभिः स्वर्गं यत्रादित्या मधु भक्षयन्ति तृतीये नाके अधि वि श्रयस्व ॥१८,४.३॥

हे पुरुष ! आप यज्ञ के सत्य मार्ग को भली प्रकार समझें । जिन यज्ञ से सम्बन्धित मार्गों से पुण्यकर्म करने वाले अङ्गिरस जाते हैं, उन्हीं मार्गों से आप स्वर्गलोक को जाएँ। जिस स्वर्ग में अदिति पुत्र देवगण मधुर अमृतका उपभोग करते हैं, उस दुःख- क्लेश रहित तृतीय स्वर्गलोक में जाकर आप विश्रान्ति ग्रहण करें ॥१८,४.३॥

त्रयः सुपर्णा उपरस्य मायू नाकस्य पृष्ठे अधि विष्टपि श्रिताः । स्वर्गा लोका अमृतेन विष्ठा इषमूर्जं यजमानाय दुह्राम् ॥१८,४.४॥

उत्तम रीति से गमनशील अग्नि, वायु और सूर्य तथा मेघों से सम्बन्धित शब्दध्वनि करने वाले वायु और पर्जन्य, ये सम्पूर्ण देव स्वर्ग के ऊपर विराजमान हैं। स्वर्गलोक सुधारस से परिपूर्ण है । यह (लोक) यज्ञ के अनुष्ठानकर्ता याजकों को अभीष्ट अन्न और बल प्रदान करे ॥१८,४.४॥

जुहूर्दाधार द्यामुपभृदन्तरिक्षं ध्रुवा दाधार पृथिवीं प्रतिष्ठाम् । प्रतीमां लोका घृतपृष्ठाः स्वर्गाः कामंकामं यजमानाय दुह्राम् ॥१८,४.५॥

जुहू (घृताहुति देने वाले पात्र या साधन) ने द्युलोक को धारण किया। उपभृत (पुनः भर देने वाले) पात्र अन्तरिक्ष को धारण किये हैं, ध्रुव (स्थिर स्वभाव वाले पात्र या संसाधन) ने आश्रयदाता पृथ्वी को धारण कर रखा है। इस ध्रुवा से धारित भूमि को लक्षित करके देदीप्यमान पृष्ठभागयुक्त स्वर्गलोक, यज्ञकर्ता यजमान की सम्पूर्ण अभिलाषाओं को पूर्ण करें ॥१८,४.५॥

ध्रुव आ रोह पृथिवीं विश्वभोजसमन्तरिक्षमुपभृदा क्रमस्व ।

जुहु द्यां गछ यजमानेन साकं स्रुवेण वत्सेन दिशः प्रपीनाः सर्वा धुक्ष्वाहृण्यमानः ॥१८,४.६॥

हे धुवा (स्थिर रहकर धारण करने वाली क्षमता) ! सम्पूर्ण विश्व की पालनकर्मी पृथ्वी पर यजमान के साथ आरोहण करके विराजमान हों । हे उपभृत ! आप यजमान के साथ अन्तरिक्ष लोक में आरोहण करें । हे जुहू ! आप द्युलोक में यजमान के साथ जाएँ। इस प्रकार से है यजमान ! आप संकोच त्यागकर सुवा रूपी वत्स से भली प्रकार (दूध देने के लिए तैयार की गई दिशा रूपी गौओं से अभिलषित पदार्थों को प्राप्त करें ॥१८,४.६॥

तीर्थैस्तरन्ति प्रवतो महीरिति यज्ञकृतः सुकृतो येन यन्ति । अत्रादधुर्यजमानाय लोकं दिशो भूतानि यदकल्पयन्त ॥१८,४.७॥

तीर्थ और यज्ञ जैसे सत्कर्म सम्पन्न करने वाले सत्पुरुष बड़ी से बड़ी आपदाओं से छुटकारा पा जाते हैं, यह विचार करने वाले यज्ञकर्ता पुरुष जिस रास्ते से स्वर्ग में पहुँचते हैं, उस मार्ग की खोज करते हुए याज्ञिक, इस यजमान के लिए भी वह श्रेष्ठ पथ- प्रशस्त करें ॥१८,४.७॥

अङ्गिरसामयनं पूर्वो अग्निरादित्यानामयनं गार्हपत्यो दक्षिणानामयनं दक्षिणाग्निः ।
महिमानमग्नेर्विहितस्य ब्रह्मणा समङ्गः सर्व उप याहि शग्मः ॥१८,४.८॥

पूर्व दिशा में आहवनीय अग्नि, अङ्गिरसों का अयन नामक सत्र (यज्ञ) है । गार्हपत्य अग्नि, आदित्य देवों का अयन नामक सत्र यज्ञ है । दक्षिण दिशा में दक्षिणाग्नि, दक्षायन नामक सत्र है । हे पुरुष ! आप सुदृढ़तायुक्त एवं सम्पूर्ण अवयवों से युक्त होकर वेद मन्त्रों से यज्ञ में स्थापित की गई अग्नि की महत्ता को सुखपूर्वक प्राप्त करें ॥१८,४.८॥

पूर्वो अग्निष्ट्वा तपतु शं पुरस्ताच्छं पश्चात्तपतु गार्हपत्यः ।
दक्षिणाग्निष्टे तपतु शर्म वर्मोत्तरतो मध्यतो अन्तरिक्षाद्दिशोदिशो अग्ने परि पाहि घोरात्॥१८,४.९॥

पूर्व दिशा की अग्नि आपको अग्रभाग से सुखपूर्वक तपाये। गार्हपत्य अग्नि पृष्ठ भाग से आपको सुखपूर्वक तपाये । दक्षिण दिशा में दक्षिणाग्नि (कवच) के समान चारों ओर से आपका रक्षण करती हुई आपको सुखपूर्वक तपाये। हे अग्निदेव ! आप उत्तर आदि समस्त दिशाओं से आने वाले क्रूर हिंसकों से इस समर्पित व्यक्ति की सुरक्षा करें ॥१८,४.९॥

यूयमग्ने शंतमाभिस्तनूभिरीजानमभि लोकं स्वर्गम् ।
अश्वा भूत्वा पृष्टिवाहो वहाथ यत्र देवैः सधमादं मदन्ति
॥१८,४.१०॥

हे अग्निदेव !भिन्न-भिन्न स्थलों पर प्रतिष्ठित हुए आप अपने आधानकर्ता को परम मंगलकारी अपने शरीरों से (घोड़ों के समान अपनी पीठ पर बैठाकर) स्वर्गलोक की ओर ले जाएँ । उस लोक में यज्ञकर्ता यजमान देवों के साथ आनंद का उपभोग करते हुए हर्ष को प्राप्त हों ॥१८,४.१०॥

शमग्ने पश्चात्तप शं पुरस्ताच्छमुत्तराच्छमधरात्तपैनम् ।
एकस्त्रेधा विहितो जातवेदः सम्यगेनं धेहि सुकृतामु लोके
॥१८,४.११॥

हे अग्निदेव ! इस यज्ञकर्ता को पश्चिम भाग से, पूर्व भाग से, उत्तर और नीचे से सुखपूर्वक तपाएँ । हे उत्पन्न पदार्थों को जानने वाले जातवेदा अग्ने ! एक होते हुए भी आपको पूर्वाग्नि, गार्हपत्याग्नि और दक्षिणाग्नि इन तीन तरह से प्रतिष्ठित किया जाता है। ऐसे अग्निहोत्री को पुण्यात्माओं के लोक में भली प्रकार से स्थापित करें ॥१८,४.११॥

शमग्नयः समिद्धा आ रभन्तां प्राजापत्यं मेध्यं जातवेदसः ।

श्रृतं कृण्वन्त इह माव चिक्षिपन् ॥१८,४.१२॥

समिधाओं से प्रदीप्त जातवेदा आदि अग्नियाँ इस प्रजापति के मेध्य (यजनीय पदार्थ, जीव या आत्मा) को यहाँ (यज्ञीय वातावरण में) प्रेरित करें, पतित या पथभ्रष्ट न होने दें ॥१८,४.१२॥

यज्ञ एति विततः कल्पमान ईजानमभि लोकं स्वर्गम् ।
तमग्नयः सर्वहुतं जुषन्तां प्राजापत्यं मेध्यं जातवेदसः ॥१८,४.१३॥

विशाल पितृमेधयज्ञ समुचित रूप से सम्पन्न होकर यज्ञकर्ता को स्वर्गीय सुखों को प्राप्त कराता है । अतएव जातवेदा आदि अग्नियाँ सर्वस्व होम करने वाले (यज्ञकर्ता) को भली प्रकार तृप्त-संतुष्ट करें ॥१८,४.१३॥

ईजानश्चितमारुक्षदग्निं नाकस्य पृष्ठाद्दिवमुत्पतिष्यन् ।
तस्मै प्र भाति नभसो ज्योतिषीमान्त्स्वर्गः पन्थाः सुकृते देवयानः ॥१८,४.१४॥

स्वर्ग से ऊपरी घुलोक की अभिलाषा से युक्त यह पुरुष, चयन की गई अग्नि को प्रदीप्त करता है। उस श्रेष्ठ याजक

के निमित्त अन्तरिक्ष का प्रकाशमान देवयान मार्ग, उसके स्वर्ग में आरोहण करते हुए प्रकाशित हो ॥११८,४.४॥

अग्निर्होताध्वर्युष्टे बृहस्पतिरिन्द्रो ब्रह्मा दक्षिणतस्ते अस्तु ।
हुतोऽयं संस्थितो यज्ञ एति यत्र पूर्वमयनं हुतानाम् १८,४.॥१५॥

हे यज्ञनिष्ठ ! आपके यज्ञ में अग्निदेव होता', बृहस्पतिदेव 'अध्वर्यु तथा इन्द्रदेव 'ब्रह्मा' बनकर दाहिनी ओर (शुभ दिशा में) स्थित हों । इस प्रकार से सम्पन्न यह यज्ञ उसी स्थान पर जाता है, जहाँ पूर्वकाल में आहुति स्वरूप दिये गये यज्ञ स्थित हैं ॥१८,४.१५॥

अपूपवान् क्षीरवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,४.१६॥

यहाँ इस यज्ञ में पुए (अन्न- घी में पकाकर बनाये गये) तथा क्षीर (दूध में अन्न पकाकर बनाये गये) आदि पकवान स्थित हों । हम श्रेष्ठ लोकों के तथा उनमें ले जाने वाले मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.१६॥

अपूपवान् दधिवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.१७॥

पुओं और दधियुक्त चरु यहाँ इस यज्ञ में स्थित हौ । हम श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता, उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.१७॥

अपूपवान् द्रप्सवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.१८॥

पुओं तथा अन्य रसों से युक्त चरु यहाँ इस यज्ञ में स्थित हो । म श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.१८॥

अपूपवान् घृतवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.१९॥

पुओं तथा घृत से युक्त चरु यहाँ इस यज्ञ में स्थित हो । हम श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.१९॥

अपूपवान् मांसवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.२०॥

अपूपों और गूदे से बना चरु इस यज्ञशाला में स्थित हो। हम श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.२०॥

अपूपवान् अन्नवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.२१॥

अपूपों और अन्न से युक्त चरु इस यज्ञ में स्थित हो । म श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.२१॥

अपूपवान् मधुमांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ
॥१८,४.२२॥

अपूपों और मधु से युक्त चरु इस यज्ञ में स्थित हो। हम श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.२२॥

अपूपवान् रसवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,४.२३॥

अपूपों और रसों से युक्त चरु इस यज्ञ में स्थित हो । म श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारें हैं ॥१८,४.२३॥

अपूपवान् अपवांश्चरुरेह सीदतु ।
लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्थ ॥१८,४.२४॥

अपूपों और जल से निर्मित चरु इस यज्ञ में स्थित हो । हम श्रेष्ठ लोकों तथा उनके मार्गों के निर्माता उन देवों का यजन करते हैं, जो यहाँ इस यज्ञ में पधारे हैं ॥१८,४.२४॥

अपूपापिहितान् कुम्भान् यांस्ते देवा अधारयन् ।
ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्चुतः ॥१८,४.२५॥

जिन अपूपों (पुओं) से भरे हुए कलशों को आपके उपभोग हेतु देवों ने ग्रहण किया है, वे कलश आपके निमित्त स्वधायुक्त, मधुरतापूर्वक तथा घृतादि से सम्पन्न हों ॥१८,४.२५॥

यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्राः स्वधावतीः ।
तास्ते सन्तूद्भ्वीः प्रभ्वीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम् ॥१८,४.२६॥

तिल मिश्रित जिन स्वधान्नयुक्त जौ की खीलों को हम समर्पित करते हैं, वे स्त्रीलें तुम्हारे परलोक प्रस्थान पर विस्तृत सत्परिणाम देने वाली हों । राजा यम आपको खीलों का उपभोग करने की आज्ञा प्रदान करें ॥१८,४.२६॥

अक्षितिं भूयसीम् ॥१८,४.२७॥

बहुत समय तक के लिए (यमराज इन विस्तृत खीलों के उपभोग की अनुमति प्रदान करें ॥१८,४.२७॥

द्रप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः ।
समानं योनिमनु सम्चरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः ॥१८,४.२८॥

सोमरस पृथ्वी पर ऋषियों तथा देवताओं के लिए अन्तरिक्षलोक से उत्पन्न हुआ है । जो हमारे प्रखर-तेजस्वी पूर्वज थे, उन्हें ही यह सोमरस उपलब्ध हुआ। हम सात याज्ञिक समानलोक में रहने वाले, उस दिव्य सोमरस कोआहुतिरूप में समर्पित करते हैं ॥१८,४.२८॥

शतधारं वायुमर्कं स्वर्विदं नृचक्षसस्ते अभि चक्षते रयिम् ।
ये पृनन्ति प्र च यछन्ति सर्वदा ते दुह्रते दक्षिणां सप्तमातरम्
॥१८,४.२९॥

सैंकड़ों मार्गों से प्रवाहित वायु के लिए, स्वर्ग को प्राप्त कराने वाले आदित्यगण के लिए, अन्य सभी मनुष्यों के लिए तथा कल्याणकारी देवों को ऐश्वर्य अर्पित करने के लिए वे यजमान तत्पर रहते हैं। जो लोग देवों को संतुष्ट करते तथा यज्ञादि में अन्न, द्रव्यादि का दान देते हैं, वे सात होताओं की दक्षिणा पाने के पात्र होते हैं ॥१८,४.२९॥

कोशं दुहन्ति कलशं चतुर्बिलमिडां धेनुं मधुमतीं स्वस्तये ।
ऊर्जं मदन्तीमदितिं जनेष्वग्ने मा हिंसीः परमे व्योमन्
॥१८,४.३०॥

मंगलकारी कार्यों के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चार स्तनरूपी छिद्र वाली, नानाविध वस्तुओं के कोश

(खजाने) से परिपूर्ण, मधुर अन्नप्रदात्री भूमिरूपी गाय को दुहते हैं । हे अग्निदेव ! जन समाज में अपने दूधरूपी अन्न से तृप्ति- प्रदात्री अखण्डनीय अदिति (न मारने योग्य गाय) देवी और बलप्रदायक अन्न को क्षति न पहुँचाए ॥१८,४.३०॥

एतत्ते देवः सविता वासो ददाति भर्तवे ।
तत्त्वं यमस्य राज्ये वसानस्तार्प्यं चर ॥१८,४.३१॥

हे पुरुष ! सब प्रकार सवितादेव आपके आच्छादन हेतु इस वस्त्र को देते हैं। तृप्तिप्रद इस वस्त्र को ओढ़कर आप यमराज के राज्य में विचरण करें ॥१८,४.३१॥

धाना धेनुरभवद्वत्सो अस्यास्तिलोऽभवत्।
तां वै यमस्य राज्ये अक्षितामुप जीवति ॥१८,४.३२॥

हे प्रेतपुरुष ! आप वत्सरूप तिल और क्षयरहित धेनुरूपा खीलों से अपना जीवन व्यापार चंलाएँ; क्योंकि ये भुने हुए जौ की खीले कामधेनु स्वरूपा और तिल ही इसके वत्स (बछड़े) रूप हैं ॥१८,४.३२॥

एतास्ते असौ धेनवः कामदुघा भवन्तु ।
एनीः श्येनीः सरूपा विरूपास्तिलवत्सा उप तिष्ठन्तु त्वात्र ॥१८,४.३३॥

हे अमुक पुरुष ! ये लाल एवं श्वेत वर्ण वत्स के समान और उनसे भिन्न स्वरूपवाली तिलात्मक वत्सरूपा खीलें तुम्हारे लिए कामनाओं को पूर्ण करने वाली कामधेनु स्वरूप हों तथा इस यमगृह में अभीष्ट फल प्रदान करने के लिए तुम्हारे समीप विद्यमान रहें ॥१८,४.३३॥

एनीर्धाना हरिणीः श्येनीरस्य कृष्णा धाना रोहिणीर्धेनवस्ते ।
तिलवत्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहा सन्त्वनपस्फुरन्तीः
॥१८,४.३४॥

आपके हरितवर्ण धान, अरुण व श्वेत वर्णवाली गौएँ हों, कृष्ण वर्ण के धान, लालवर्ण की गौएँ हों, तिल वत्सा गौएँ कभी विनष्ट न हों और इसे सदैव ऊर्जाप्रदायक दुग्धरस प्रदान करती रहें ॥१८,४.३४॥

वैश्वानरे हविरिदं जुहोमि साहस्रं शतधारमुत्सम् ।
स बिभर्ति पितरं पितामहान् प्रपितामहान् बिभर्ति पिन्वमानः
॥१८,४.३५॥

वैश्वानर अग्नि में हम इन हवियों को समर्पित करते हैं, जो हवियाँ नानाप्रकार के जल प्रवाहों से युक्त हैं, वे जलवर्षा के मेघ के समान सींचती हुई, अपने उपजीवी पितरजनों

के लिए तृप्तिप्रद हों । इन हवियों से हर्षित होकर वैश्वानर अग्निदेव, पितर श्रेणी को प्राप्त हमारे पिता, दादा, परदादा इत्यादि सभी पूर्वजों का पोषण करें ॥१८,४.३५॥

सहस्रधारं शतधारमुत्समक्षितं व्यच्यमानं सलिलस्य पृष्ठे ।
ऊर्जं दुहानमनपस्फुरन्तमुपासते पितरः स्वधाभिः
॥१८,४.३६॥

सैकड़ों-हजारों धाराओं के स्रोत से सम्पन्न, मेघों की तरह जल से परिपूर्ण, अन्तरिक्ष के ऊपरी भाग में व्याप्त, अन्न-बल प्रदाता, कभी चलायमान न होने वाले हविष्य को पितरजन स्वधारूप आहुति के साथ ग्रहण करते हैं ॥१८,४.३६॥

इदं कसाम्बु चयनेन चितं तत्सजाता अव पश्यतेत ।
मर्त्योऽयममृतत्वमेति तस्मै गृहान् कृणुत यावत्सबन्धु
॥१८,४.३७॥

सञ्चयन प्रक्रिया द्वारा संगृहीत किये हुए इस जल से गीले अस्थि समूह को है सजातीय बन्धुगण ! यहाँ आकर भली प्रकार देखें । यह मरणधर्मा प्रेतपुरुष (जिसका कि अस्थि सञ्चयन किया गया हैं) अमरत्व को प्राप्त कर रहा है।

उपस्थित सभी सजातीय बन्धु इसके लिए आश्रय स्थानों का निर्माण करें ॥१८,४.३७॥

इहैवैधि धनसनिरिहचित्त इहक्रतुः ।
इहैधि वीर्यवत्तरो वयोधा अपराहतः ॥१८,४.३८॥

हे मनुष्य ! आप यहीं पर रहते हुए वृद्धि को प्राप्त करें । यहीं पर ज्ञानवान् और कर्मशील होकर हमारे लिए धन-सम्पदा देने वाले बनें। यहीं पर अति बलशाली और शत्रुओं से अपराजेय होकर अन्न से दूसरोंका परिपोषण करते हुए प्रबृद्ध हों ॥१८,४.३८॥

पुत्रं पौत्रमभितर्पयन्तीरापो मधुमतीरिमाः ।
स्वधां पितृभ्यो अमृतं दुहाना आपो देवीरुभयांस्तर्पयन्तु ॥१८,४.३९॥

आचमन करने योग्य यह मधुरतापूर्ण जल पुत्र-पौत्रादि को परितृप्त करता है । इस पिण्ड पर जीवन को चलाने वाले पितरों के निमित्त अमृतरूप यह जल, स्वयं को प्रसन्नता देने वाली स्वधा को प्रदान करता है । ये दिव्य जल मातृवंश और पितृवंश के दोनों प्रकार के पितरों को परितृप्त करें ॥१८,४.३९॥

आपो अग्निं प्र हिणुत पितॄंरुपेमं यज्ञं पितरो मे जुषन्ताम् ।
आसीनामूर्जमुप ये सचन्ते ते नो रयिं सर्ववीरं नि यच्छान्
॥१८,४.४०॥

हे जलप्रवाहो ! आप इस अग्नि को पितरजनों के समीप भेजें । हमारे पितृगण इस यज्ञान्न का सेवन करें। जो पितर हमारे द्वारा प्रदत्त अन्न को ग्रहण करने हेतु समीप उपस्थित होते हैं, वे सभी पितर हमें पराक्रम सम्पन्न वीर पुत्रोंसहित प्रचुर धन- सम्पदा प्रदान करें ॥१८,४.४०॥

समिन्धते अमर्त्यं हव्यवाहं घृतप्रियम् ।
स वेद निहितान् निधीन् पितॄन् परावतो गतान् ॥१८,४.४१॥

अविनाशी, घृतप्रिय, हवियों को ले जाने वाले अग्निदेव को कार्यकुशल पुरुष समिधाओं द्वारा प्रज्वलित करते हैं। यही अग्निदेव अदृश्य निधियों के समान अतिदूर- देश में विद्यमान पितरों को जानते हैं, अतएव वहीं पितरों को हविष्यान्न पहुँचाएँ, वहीं एहुँचा पाने में सक्षम भी हैं ॥१८,४.४१॥

यं ते मन्थं यमोदननं यन् मांसं निपृणामि ते ।
ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्चुतः ॥१८,४.४२॥

हे पितरो ! जिस मंथन प्रक्रिया से प्राप्त पदार्थ मक्खन, भात और अन्न आदि को हम आपके लिए समर्पित करते हैं, वह आपके लिए स्वधायुक्त, मधुरता सम्पन्न और घृतादि से परिपूर्ण हो ॥१८,४.४२॥

यास्ते धाना अनुकिरामि तिलमिश्राः स्वधावतीः ।
तास्ते सन्तूद्भ्वीः प्रभ्वीस्तास्ते यमो राजानु मन्यताम् ॥१८,४.४३॥

हे पितरो ! तुम्हारे निमित्त जिन काले तिलों से युक्त स्वधान्न तथा भूनकर तैयार की गई जौ की खीलों को हम समर्पित कर रहे हैं, वहीं खीलें परलोक गमन पर तुम्हें बृहद् आकार और बड़ी मात्रा में प्राप्त हों। इन खीलोंको उपभोग करने की यमदेव तुम्हें आज्ञा प्रदान करें ॥१८,४.४३॥

इदं पूर्वमपरं नियानं येना ते पूर्वे पितरः परेताः ।
पुरोगवा ये अभिसाचो अस्य ते त्वा वहन्ति सुकृतामु लोकम् ॥१८,४.४४॥

यह जो सामने शकट (संवाहक तंत्र-शरीर या यज्ञीय प्रवाह) है, वह प्राचीन के साथ नवीन भी है। इसी से तुम्हारे पूर्वज गये थे। इस समय योजित किये जाते इस शकट के दोनों

तरफ जो दो वृषभ हैं, वे तुम्हें पुण्यात्माओं के लोक में लेकर जाएँ ॥१८,४.४४॥

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने ।
सरस्वतीं सुकृतो हवन्ते सरस्वती दाशुषे वार्यं दात्॥१८,४.४५॥

देवत्व प्राप्त करने के लिए मनुष्य सरस्वती का आवाहन करते हैं । श्रेष्ठ कर्मशील मनुष्य भी वाणी की देवी सरस्वती को बुलाते हैं। देवी सरस्वती हविप्रदाता यजमान को वरण करने योग्य अभिलषित पदार्थ प्रदान करें ॥१८,४.४५॥

सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः ।
आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यस्मे ॥१८,४.४६॥

वेदी की दक्षिण दिशा में विराजमान पितर, सरस्वती का आवाहन करते हैं। हे पितृगण ! आप यज्ञ में पधारकर हर्षित हों । सरस्वती को परितृप्त करते हुए हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों से स्वयं तृप्ति प्राप्त करें । हे सरस्वती देवि ! पितरों द्वारा आवाहित किये जाने पर आप आरोग्यप्रद अन्न प्रदान करके हमें कृतार्थ करें ॥१८,४.४६॥

सरस्वति या सरथं ययाथोक्थैः स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती ।
सहस्रार्घमिडो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानाय धेहि
॥१८,४.४७॥

हे सरस्वती देवि ! आप उक्थ, शस्त्र और स्वधान्न से परितृप्त होती हुई पितरजनों के साथ एक ही रथ पर आती हैं। आप इस यज्ञ में यजमान साधक के लिए हजारों (व्यक्तियों) द्वारा वन्दनीय अन्नभाग और धन को पुष्ट करें ॥१८,४.४७॥

पृथिवीं त्वा पृथिव्यामा वेशयामि देवो नो धाता प्र तिरात्यायुः
।
परापरैता वसुविद्वो अस्त्वधा मृताः पितृषु सं भवन्तु
॥१८,४.४८॥

हे पृथिवि (पार्थिव काया) ! तुम्हें हम पृथ्वी तत्त्व में प्रविष्ट करते हैं। धाता देव हमें दीर्घायु बनाएँ । हे दूर चले गये (प्राणो) ! तुम्हारे लिए (धाता देव) आवास प्रदायक हों । मृतात्माएँ पितरों के साथ जा मिलें ॥१८,४.४८॥

आ प्र च्यवेथामप तन् मृजेथां यद्वामभिभा अत्रोचुः ।
अस्मादेतमघ्न्यौ तद्वशीयो दातुः पितृष्विहभोजनौ मम
॥१८,४.४९॥

तुम दोनों (प्राण और अपान अथवा सूक्ष्म एवं कारण देह) इस शकट (धारक काया) से विलग हो जाओ। हे अहिंसनीय ! इस (नाशवान् काया) के कारण (तुमसे) जो निन्दनीय वचन कहे जाते हैं, उनसे मुक्त होकर शुद्ध हो जाओ। इस (पितृमेध) में प्रदत्त (आहुति अथवा दान दक्षिणा) हमारा पालन करने वाली हों ॥१८,४.४९॥

एयमगन् दक्षिणा भद्रतो ना अनेन दत्ता सुदुघा वयोधाः ।
यौवने जीवान् उपपृञ्चती जरा पितृभ्य उपसंपराणयादिमान्
॥१८,४.५०॥

(इस पितृमेध में) श्रेष्ठ दुग्ध (पोषण तथा बल देने वाली यह दक्षिणा हमें (याजकों) को कल्याणकारी (माध्यमों अथवा स्थानों) से प्राप्त हुई है, जिससे हमारा अमंगल नहीं होगा। जिस प्रकार युवावस्था के पश्चात् जीवों को जरावस्था निश्चित रूप से आती हैं, उसी प्रकार यह दक्षिणा इन प्राणियों (संस्कारित आत्माओं) को पितरों के समीप श्रेष्ठ रीति से अवश्य पहुँचाएगी ॥१८,४.५०॥

इदं पितृभ्यः प्र भरामि बर्हिर्जीवं देवेभ्य उत्तरं स्तृणामि ।
तदा रोह पुरुष मेध्यो भवन् प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम्
॥१८,४.५१॥

इन कुशों को हम पितरजनों के निमित्त (आसनरूप में) बिछाते हैं और देवों के लिए जीवों से भिन्न या उच्चस्तर पर कुश के आसन बिछाते हैं । हे पुरुष ! पितृमेध के लिए उपयोगी बनकर, आप इन कुशाओं पर आरोहणकरें, ताकि पितरजन आपको परलोक में प्रस्थान किया हुआ मानें ॥१८,४.५१॥

एदं बर्हिरसदो मेध्योऽभूः प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम् ।
यथापरु तन्वं सं भरस्व गात्राणि ते ब्रह्मणा कल्पयामि
॥१८,४.५२॥

हे पितरो ! इन बिछाये गये कुशों पर आप आरूढ़ हो गये हैं, पितृयज्ञ के निमित्त आप पवित्रता धारण करें चुके हैं । पितरजन आपको परे (उच्च लोकों में) गया हुआ जानें । अपनी सूक्ष्म देह के जोड़ों को (घटकों को) पूर्ण बनाएँ । हम आपके अंगों को ब्रह्मशक्ति के द्वारा (योग्य) स्वरूप प्रदान करते हैं ॥१८,४.५२॥

पर्णो राजापिधानं चरूणामूर्जो बलं सह ओजो न आगन् ।
आयुर्जीविभ्यो विदधद्दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥१८,४.५३॥

राजा (प्रकाशमान) पर्ण (पत्ता या पालनकर्ता) इस (दिव्या चरु का आवरण है । वह (चरु) हमें अन्न, बलिष्ठता

संघर्षशक्ति, ओजस् प्रदान करे एवं जीवों को सौ शरद ऋतुओं (वर्षों) की आयु धारण कराए ॥१८,४.५३॥

ऊर्जो भागो य इमं जजानाश्मान्नानामाधिपत्यं जगाम ।
तमर्चत विश्वमित्रा हविर्भिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धात्॥१८,४.५४॥

(हे मित्रो !) अश्म (कूटने वाले पत्थरों) के द्वारा अन्न के स्वामी को जो (चरु) प्राप्त हुआ है, अन्न का विभाजन करने वाले जिस(यम) के द्वारा यह उत्पन्न हुआ है, वियों द्वारा उनका अर्चन करो । वे हमें दीर्घायु प्रदान करें ॥१८,४.५४॥

यथा यमाय हर्म्यमवपन् पञ्च मानवाः ।
एवा वपामि हर्म्यं यथा मे भूरयोऽसत ॥१८,४.५५॥

पाँच श्रेणी के जन समुदाय ने जैसे यमराज के लिए आश्रयस्थल बनाया है, वैसे ही पितरों के लिए इस पितृगृह को हम ऊँचा उठाते हैं। हे बन्धुगण ! इससे आप प्रचुर संख्या में निवास स्थान प्राप्त कर सकेंगे ॥१८,४.५५॥

इदं हिरण्यं बिभृहि यत्ते पिताबिभः पुरा ।
स्वर्गं यतः पितुर्हस्तं निर्मृङ्ढि दक्षिणम् ॥१८,४.५६॥

(हे पुरुष !) आप इस हिरण्य (स्वर्ण निर्मित आभूषण अथवा तेजस्वी आवरण) को धारण करें, जिसे आपके पिता ने भी पहले धारण किया था। इस प्रकार आप स्वर्ग की ओर जाते हुए पिता के दाहिने हाथ (अथवा दक्षिणा देने की प्रवृत्ति) की शोभा बढ़ाएँ ॥१८,४.५६॥

ये च जीवा ये च मृता ये जाता ये च यज्ञियाः ।
तेभ्यो घृतस्य कुल्यैतु मधुधारा व्युन्दती ॥१८,४.५७॥

जीवित प्राणियों, दिवंगत हुए प्राणियों , उत्पन्न हुए प्राणियों तथा उत्पन्न होने वाले प्राणियों, ऐसे सभी श्रद्धास्पदों को मधु – प्रवाह से उमड़ती हुई घृत अथवा जल की नदी उपलब्ध हो ॥१८,४.५७॥

वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सूरो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः ।
प्राणः सिन्धूनां कलशामचिक्रददिन्द्रस्य हार्दिमाविशन् मनीषया ॥१८,४.५८॥

स्तोताओं को अभीष्ट फलदायक विशिष्ट- दर्शनीय, सोम पवित्र स्थिति में गमन करता है। यह सोमरूप सूर्य अहोरात्र का निष्पन्नकर्ता है। यही उषाकाल और द्युलोक की वृद्धि का निमित्त कारण है । वर्षा का कारण भूत होने से नदियों को प्राणरूप है। यह सोम कलशों को लक्षित करके

(कलशों की ओर गमन करते हुए भयंकर क्रन्दन करता है । यह तीनों प्रकार के सवनों में पूजनीय इन्द्रदेव के हृदय में (उदर में) प्रवेश करता है ॥१८,४.५८॥

त्वेषस्ते धूम ऊर्णोतु दिवि षं छुक्र आततः ।
सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥१८,४.५९॥

हे पवित्रकारक अग्ने ! प्रदीप्त होने के पश्चात् आपका भ्रवल धूम्र अन्तरिक्ष में फैलकर दृष्टिगोचर होता है। हे पावन अग्निदेव ! स्तुति के प्रभाव से आप सूर्य की तरह प्रकाशित होते हैं ॥१८,४.५९॥

प्र वा एतीन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतिं सखा सख्युर्न प्र मिनाति संगिरः ।
मर्य इव योषाः समर्षसे सोमः कलशे शतयामना पथा ॥१८,४.६०॥

यह अभिषुत सोमरस इन्द्रदेव के उदर में ही जाता है। मित्रवत् हितैषी सोम, अभिषवण और स्तोत्रादि से मित्ररूप यजमान की कामनाओं को निष्फल नहीं, अपितु पूर्ण करते हैं । पुरुष के स्त्री से संगत होने के समान हीसोम द्रोणकलश में हजारों-असंख्य धाराओं से भली प्रकार आता है ॥१८,४.६०॥

अक्षन्न् अमीमदन्त ह्यव प्रियामधूषत ।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा यविष्ठा ईमहे ॥१८,४.६१॥

मेधावी पितरगण पिण्डों का सेवन करके तृप्ति को प्राप्त हुए, तृप्ति द्वारा वे अपनी प्रियदेह को क्रान्तिमान् बनाते हैं। ये पितर स्वयं प्रकाशमान होकर हमारी प्रशंसा करते हैं । पिण्डसेवन से संतुष्ट पितरों से हम युवापुरुषअपने अभीष्ट फलों की याचना करते हैं ॥१८,४.६१॥

आ यात पितरः सोम्यासो गम्भीरैः पथिभिः पितृयाणैः ।
आयुरस्मभ्यं दधतः प्रजां च रायश्च पोषैरभि नः सचध्वम् ॥१८,४.६२॥

हे सोमपानकर्ता पितरो ! आप गम्भीर पितृयान मार्गों से आगमन करें तथा हमें आयुष्य, प्रजा (सन्तति) और धन-सम्पदा से भली प्रकार परिपुष्ट करें ॥१८,४.६२॥

परा यात पितरः सोम्यासो गम्भीरैः पथिभिः पूर्याणैः ।
अधा मासि पुनरा यात नो गृहान् हविरत्तुं सुप्रजसः सुवीराः ॥१८,४.६३॥

हे सोमपानकर्ता पितृगण ! आप अपने पितृलोक के गम्भीर असाध्य पितृयान मार्गों से अपने लोक को जाएँ। मास की पूर्णता पर अमावस्या के दिन हविष्य का सेवन करने के लिए हमारे गृहों में आप पुनः आएँ । हे पितृगण !आप ही हमें उत्तम प्रजा और श्रेष्ठ सन्तति प्रदान करने में सक्षम हैं ॥१८,४.६३॥

यद्वो अग्निरजहादेकमङ्गं पितृलोकं गमयं जातवेदाः ।
तद्व एतत्पुनरा प्याययामि साङ्गाः स्वर्गे पितरो मादयध्वम् ॥१८,४.६४॥

हे पितरो ! आपको पितृलोक में ले जाते समय जातवेदा अग्नि ने आपके जिस एक भाग को चिताग्नि में भस्म नहीं किया है, आपके उस अंग को हम पुन: अग्नि को सौंपकर आपको अगली यात्रा के लिए तैयार करते हैं। अपने सभी अङ्ग-अवयवों से परिपूर्ण होकर हे पितृगण ! आप स्वर्गलोक में पहुँचकर आनन्दपूर्वक वास करें॥१८,४.६४॥

अभूद्दूतः प्रहितो जातवेदाः सायं न्यह्न उपवन्द्यो नृभिः ।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्न् अद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि ॥१८,४.६५॥

मनुष्यों द्वारा प्रातः – सायं वन्दित अग्निदेव को हमने पितरजनों के समीप भेजा है। हे अग्निदेव ! आप हमारे द्वारा प्रदत्त हवियों को पितरों के लिए समर्पित करें । स्वधापूर्वक प्रदत्त आहुतियों को पितरजन ग्रहण करें, तदनंतर हे अग्निदेव ! आपके निमित्त दी गई आहुतियों को आप स्वयं भी ग्रहण करें ॥१८,४.६५॥

असौ हा इह ते मनः ककुत्सलमिव जामयः ।
अभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥१८,४.६६॥

हे अमुक नामवाले प्रेतपुरुष ! आपकी आसक्ति इन ईंटों द्वारा बनाये गये स्थान के प्रति है । हे श्मशान स्थल रूप भूमे ! आप उसी प्रकार इस स्थल पर स्थित प्रेत को आच्छादित करें, जिस प्रकार कुलीन स्त्रियाँ अपने कन्धे (सिर) को वस्त्र से ढक लेती हैं ॥१८,४.६६॥

शुम्भन्तां लोकाः पितृषदनाः पितृषदने त्वा लोक आ सादयामि ॥१८,४.६७॥

हे प्रेतात्मा ! जिनमें पितरगण विराजमान होते हैं, वे लोक आपके लिए शोभायमान हों। हम आपको उसी लोक में प्रतिष्ठित करते हैं ॥१८,४.६७॥

ये अस्माकं पितरस्तेषां बर्हिरसि ॥१८,४.६८॥

हे कुश से निर्मित बर्हि ! आप हमारे पूर्वपितरों के आसीन होने के स्थान बनें ॥१८,४.६८॥

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं श्रथाय ।
अधा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥१८,४.६९॥

हे वरुणदेव ! आप तीनों तापरूपी बंधनों से हमें मुक्त करें । आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक पाश हमसे दूर हों तथा मध्य एवं नीचे के बन्धन हमसे अलग करें । हे सूर्यपुत्र ! पापों से रहित होकर आपकेकर्मफल सिद्धांत में अनुशासित हम दयनीय स्थिति में न रहें ॥१८,४.६९॥

प्रास्मत्पाशान् वरुण मुञ्च सर्वान् यैः समामे बध्यते यैर्व्यामे ।
अधा जीवेम शरदं शतानि त्वया राजन् गुपिता रक्षमाणाः ॥१८,४.७०॥

हे वरुणदेव ! आप उन सभी प्रकार के पाश-बन्धनों से हमें भली प्रकार मुक्त करें, जिन बन्धनों से मनुष्य समाम अर्थात् जकड़ जाता है तथा व्याम अर्थात् उससे भी अधिक संकीर्ण

बन्धन में जकड़ जाता है । तदनन्तर हे राजा वरुण ! आपके द्वारा संरक्षित हम शतायु प्राप्त करें ॥१८,४.७०॥

अग्नये कव्यवाहनाय स्वधा नमः ॥१८,४.७१॥

कव्य के वहनकर्ता (पितरों के लिए हवि पहुँचाने को 'कव्य' कहा गया है) अग्निदेव के लिए स्वधा उच्चारण से आहुति समर्पित हो और नमन स्वीकार हो ॥१८,४.७१॥

सोमाय पितृमते स्वधा नमः ॥१८,४.७२॥

श्रेष्ठ पिता वाले सोमदेव के निमित्त यह स्वधान्न और नमन प्राप्त हो ॥१८,४.७२॥

पितृभ्यः सोमवद्भ्यः स्वधा नमः ॥१८,४.७३॥

सोमयुक्त पितृगण के लिए यह स्वधाकार आहुति और वन्दन प्राप्त हो ॥१८,४.७३॥

यमाय पितृमते स्वधा नमः ॥१८,४.७४॥

पितरों के अधिष्ठाता यमदेव को यह स्वधाकार आहुति और प्रणाम प्राप्त हो ॥१८,४.७४॥

एतत्ते प्रततामह स्वधा ये च त्वामनु ॥१८,४.७५॥

हे प्रपितामह ! आपके निमित्त पिण्डरूप में प्रदत्त यह आहुति स्वधा से युक्त हो। धर्मपत्नी, पुत्रादि पितर जो आपके अनुगामी होकर रहते हैं, उन्हें भी यह स्वधान्न प्राप्त हो ॥१८,४.७५॥

एतत्ते ततामह स्वधा ये च त्वामनु ॥१८,४.७६॥

हे पितामह ! आपके लिए यह पिण्डरूप में प्रदत्त स्वधाकार आहुति समर्पित है। धर्मपत्नी, पुत्रादि पितर जो आपके अनुगामी होकर रहते हैं, उन्हें भी यह स्वधान्न उपलब्ध हो ॥१८,४.७६॥

एतत्ते तत स्वधा ॥१८,४.७७॥

हे पिता ! आपके लिए यह पिण्डादिरूप में स्वधाकार आहुति समर्पित हो ॥१८,४.७७॥

स्वधा पितृभ्यः पृथिविषद्भ्यः ॥१८,४.७८॥

पृथ्वी पर वास करने वाले पितरों के निमित्त स्वधाकार से यह आहुति समर्पित हो ॥१८,४.७८॥

स्वधा पितृभ्यो अन्तरिक्षसद्भ्यः ॥१८,४.७९॥

अन्तरिक्षवासी पितरगण के निमित्त यह आहुति स्वधारूप में समर्पित हो ॥१८,४.७९॥

स्वधा पितृभ्यो दिविषद्भ्यः ॥१८,४.८०॥

लोकवासी पितरंगण के निमित्त स्वधा रूप प्रदत्त यह आहुति समर्पित हो ॥१८,४.८०॥

नमो वः पितर ऊर्जे नमो वः पितरो रसाय ॥१८,४.८१॥

हे पितृगण ! आपके अन्न, बल और मधुरादि रस के लिए हमारा नमन है ॥१८,४.८१॥

नमो वः पितरो भामाय नमो वः पितरो मन्यवे ॥८२॥

हे पितृगण ! आपके क्रोध और मन्यु के लिए हमारा नमन हो ॥१८,४.८२॥

नमो वः पितरो यद्घोरं तस्मै नमो वः पितरो यत्क्रूरं तस्मै ॥१८,४.८३॥

हे पितरो ! विध्वंसकारियों के लिए आपके विकरालरूप और क्रूर स्वरूप के लिए हमारा नमन हो ॥१८,४.८३॥

नमो वः पितरो यच्छिवं तस्मै नमो वः पितरो यत्स्योनं तस्मै ॥१८,४.८४॥

हे पितरो ! आपके कल्याणप्रद और सुखकारी स्वरूप के लिए हमारा प्रणाम है ॥१८,४.८४॥

नमो वः पितरः स्वधा वः पितरः ॥८५॥

हे पितरो ! आपके निमित्त नमनपूर्वक यह स्वधाकार आहुति समर्पित हो ॥१८,४.८५॥

येऽत्र पितरः पितरो येऽत्र यूयं स्थ युष्मांस्तेऽनु यूयं तेषां श्रेष्ठा भूयास्थ ॥१८,४.८६॥

हे पितरगण ! इस पितृयज्ञ में आप देवस्वरूप में विराजमान हों। अपने आश्रित अन्य पितरों से आप श्रेष्ठतर हों, वे

आपके अनुगामी हों. आप उनके श्रेष्ठ अनुगमन के निमित्त बनें ॥१८,४.८६॥

य इह पितरो जीवा इह वयं स्मः ।
अस्मांस्तेऽनु वयं तेषां श्रेष्ठा भूयास्म ॥१८,४.८७॥

हे पितरगण ! इस पितृयज्ञ में जो पितर पितृत्वगुण से युक्त हैं, उनमें आप श्रेष्ठतम बनें । इस भूलोक में पिण्डदानकर्ता हम लोग श्रेष्ठ जीवनयुक्त आयुष्य का उपभोग करें । हम समान आयु, वंश, विद्या और धन सम्पदा से सम्पन्न लोगों में भी श्रेष्ठ हों ॥१८,४.८७॥

आ त्वाग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् ।
यद्घ सा ते पनीयसी समिद्दीदयति द्यवि ।
इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥१८,४.८८॥

हे प्रकाशमान अग्निदेव ! आप देदीप्यमान और जीर्णतारहित हैं, हम अपने समक्ष आपको प्रज्वलित करते हैं । आपकी अभिनन्दनीय आभा अन्तरिक्ष में (सूर्य में) प्रकाशित होती है । हे जाज्वल्यमान अग्निदेव ! आप हम स्तोताओं को अभीष्ट अन्नरूप फल प्रदान करें ॥१८,४.८८॥

चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।

न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥१८,४.८९॥

अन्तरिक्ष में चन्द्रमा तथा धुलोक में सूर्य दौड़ रहे हैं। (हे विज्ञ पुरुषो !) तुम्हारा स्तर सुनहरी धारवाली विद्युत् को जानने योग्य नहीं है । हे द्युलोक एवं भूलोक ! आप हमारे भावों को समझें (हमें उनका बोध करने की सामर्थ्य प्रदान करें) ॥१८,४.८९॥

॥इति अष्टादशं काण्डम्॥